||ओ३म्||

इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम् अपघ्नन्तो अरावणः॥

गुरु विरजानन्द दण्डी

आर्य संकल्प

(बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष-36 मार्च अंक-3

जो उन्नति करना चाहते हो, तो आर्य समाज के साथ मिलकर उसके उद्धेश्यानुसार कार्य करना स्वीकार करो, नहीं तो कुछ भी हाथ नहीं लगेगा।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा

कार्यालय : श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला, पट्ना-४ (बिहार)

आर्य संकल्प

सम्पादक
रमेन्द्र कुमार गुप्ता
मो. 9334184136

सह सम्पादक
संजय सत्यार्थी
मो. 9006166168
प्रेम कुमार आर्य
मो. 9570913817

सम्पादक मंडल
पं० व्यासनन्दन शास्त्री
श्री बिन्देश्वरी शर्मा
मो. 8544088138

संरक्षक
गंगा प्रसाद
सभा प्रधान

कोषाध्यक्ष
सत्यदेव गुप्ता
स्वत्वाधिकारी एवं प्रकाशक
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
श्री मुनीश्वरानन्द भवन
नयाटोला, पटना-800 004
दूरभाष : 07488199737
E-mail_arya.sankalp7@gmail.com
सदस्यता शुल्क
एक प्रति : 15/-
वार्षिक : 120/-

मुद्रक :
जय उमा प्रिन्टर्स
मो. 9430246879

संपादकीय

मानव बनने के उपाय

वेद में मनुष्य के लिये सबसे बड़ा उपदेश है कि वह विचार पूर्वक अपने और संसार के कल्याण के मार्ग पर चले। मनन नाम विचार का है, जिसके होने से ही मनुष्य नाम होता है, क्योंकि ईश्वर ने मनुष्य के शरीर में परमाणु आदि के संयोग विशेष इस प्रकार रचे हैं कि जिनसे उनको ज्ञान की उत्पत्ति होती है। उसी ज्ञान से प्रभु के दिव्य गुणों को मनुष्य समझे और समझकर अपने जीवन में धारण करे। प्रभु का शुद्ध स्वरूप समझे बिना मनुष्य में विचार और आचार की पवित्रता कभी नहीं आ सकती, हम तभी मनुष्य बन सकते जब प्रभु की सृष्टी में उसके ज्ञान विज्ञान को देखकर अपनी उन्नति के लिये अपनी योग्यता के अनुसार उस पर चलने का व्रत लें।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने भी अपने लघुग्रंथ स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश में स्पष्ट लिखा है कि ''मनुष्य उसी को कहना कि मननशील होकर स्वात्मत्व अन्यों के सुख-दुःख और हानि लाभ को समझे ! अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहा। इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्व सामर्थो से धर्मात्माओं की चाहे वे महा अनाथ निर्बल और गुण रहित क्यों न हों- उनकी रक्षा, उन्नति, प्रियाचरण और चाहे चक्रवर्ती सनाथ महाबलवान् और गुणवान भी हो तथापि उसका नाश अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करे, अर्थात् जहाँ तक हो सके वहाँ तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करे। इस काम में चाहे उसको कितना ही दारूण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही जावे परन्तु इस मनुष्यपन रूप धर्म से पृथक भी न होवें।

आर्य संकल्प

-: सूची :-

क्रम	विवरण	पृष्ठ संख्या
1.	सम्पादकीय	
2.	वेद मंत्र	1
3.	धर्म की अवधारणा	2
4.	अखण्ड भारत	13
5.	आर्यसमाज की सदस्यता	17
6.	यज्ञोपवीत का महत्त्व	19
7.	हिन्दुओं के प्रिय देश नेपाल	30

इस पत्रिका में दिये गये लेख लेखकों के अपने विचार हैं, इससे सम्पादक का कोई सम्बन्ध नहीं है ।

मार्च- 2013

ओ३म्

श्रेष्ठ धन

इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चित्तिं दक्षस्य सुभगत्वमस्मे।
पोषं रयीणामरिष्टि तनूनां स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमणम्॥

शब्दार्थ- (इन्द्र) हे ऐश्वर्यशाली परमात्मन्! (अस्मे) हम लोगों के लिए (श्रेष्ठानि) श्रेष्ठ (द्रविणानि) धन, ऐश्वर्य (धेहि) प्रदान कीजिए। (दक्षस्य) उत्साह का (चित्तिम्) ज्ञान दीजिए। (सुभगत्वम्) उत्तम सौभाग्य दीजिए। (रयीणाम् पोषम्) धनों की पुष्टि दीजिए (तनूनाम्) शरीरों की (अरिष्टिम्) अक्षति, नीरोगिता प्रदान कीजिए (वाचः) वाणी का (स्वाद्मानम्) मिठास दीजिए और (सुदिनत्वम् अह्नाम्) दिनों को सुदिनत्व दीजिए।

भावार्थ- भक्त भगवान् से श्रेष्ठ धन प्रदान करने की प्रार्थना करता है। वह श्रेष्ठ धन कौन-सा है जिसे एक भक्त चाहता है।

1. हमारे मनों में उत्साह होना चाहिए क्योंकि जागृति के अभाव में कोई भी कार्य सम्पन्न नहीं हो सकता।

2. हमारा भाग्य उत्तम होना चाहिए।

3. हमारे पास धन-धान्य और ऐश्वर्य की पुष्टि होनी चाहिए।

4. हमारे शरीर नीरोग, सबल, सुदृढ़ होने चाहिए।

5. हमारी वाणी में माधुर्य और मिठास होना चाहिए। हम मीठा और मधुर ही बोलें।

6. हमारे दिन सुदिन बनें। हमारे दिन उत्तम प्रकार व्यतीत होने चाहिए।

धर्म की अवधारणा और मतों का विभ्रम

– पं॰ रामनिवास 'गुणग्राहक'

महर्षि व्यासजी ने धर्म के उस मूल तत्त्व को, धर्म के सार को बड़े सरल शब्दों में शिष्यों के सामने रखा। महर्षि व्यास की धर्म-सम्बन्धी इस महत्त्वपूर्ण परिभाषा को लोगों ने खुले हृदय से स्वीकार किया। महाभारत के विनाशकारी युद्ध ने यद्यपि पूरी मानवता को हिलाकर रख दिया। वह इतिहास का सब से अधिक विनाश करनेवाला विश्व युद्ध था। परिवार की कलह ने विश्वयुद्ध का रूप धारण करके असंख्य जीवन ही नष्ट नही किये, बल्कि उच्च आदर्शों को भी नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। वैदिक युग के महान् मानवीय सिद्धान्त, जीवन मूल्य व धार्मिक मर्यादाएं इस महाभारत के युद्ध की भेंट चढ़ गई। युद्ध के बाद विनाश के चिन्ह ही शेष रहे और उन्हीं चिन्हों में मुँह छिपाए सिसकता रहा धर्म। यद्यपि भारत का भूमण्डल पर वह चक्रवर्ती राज्य समाप्त हो गया था। महाराज युधिष्ठिर ने कुछ काल तक अपने पूर्वजों के गौरव को बनाए रखा और उसी काल में महर्षि व्यास द्वारा बताई गई धर्म की वह अनमोल परिभाषा का भी भूमण्डलीकरण हो गया। महाभारत के बाद सत्य सनातन वैदिक धर्म के लोप हो जाने के कारण विभिन्न प्रकार के मत-पन्थ विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में सिर उठाने लगे। चूँकि तब तक महर्षि व्यास की धर्म-सम्बन्धी मौलिक परिभाषा विश्व स्तर पर व्याप्त हो चुकी थी, इसलिए विश्व के धर्म कहे जानेवाले प्रायः सभी मत-पन्थों में धर्म की वह परिभाषा आज भी ज्यों-की त्यों प्राप्त होती है। कोई थोड़ा बहुत अन्तर तो आ ही जाता है, लेकिन शब्दों के अन्तर के रहते हुए भी महर्षि व्यास की धर्म-सम्बन्धी परिभाषा का मूल भाव संसार के सभी मत-पंथों में वही है। **महर्षि व्यास के शब्दों में धर्म का सार यह है कि जो व्यवहार हमें अपने लिए स्वीकार नहीं, वह दूसरों के साथ न करें।** अब हम देखेंगे कि धर्म के नाम पर संसार में फैले सभी मत-पन्थों में चाहे अन्य कितने ही मतभेद व विरोध हों, लेकिन महर्षि व्यास के धर्म-विषयक इस मानवीय दृष्टिकोण को उन्होंने खुले हृदय से स्वीकार किया है। विभिन्न ग्रन्थों में इसका उल्लेख कुछ इस प्रकार है-

बौद्ध मत (युक्त निकाय)- ''जो स्थिति, दशा मेरे लिए सुख, हर्ष देनेवाली, आनन्द देनेवाली नहीं है, वह दूसरों के लिए भी नहीं होगी, ऐसी परिस्थिति को मैं दूसरों के ऊपर

कैसे लाद सकता हूँ।''

जैन मत- ''प्रसन्नता और दु:ख में, आनन्द और रंज में हमें सभी प्राणियों को ऐसे ही मानना चाहिए, जैसा हम अपने आपको।''

यहूदी मत- (तालमुद सब्बाद 31 अ) '' जिस बात से आप घृणा करते हो, उसे अपने साथियों तथा दूसरे इन्सानों के साथ मत करो, यही कानून है। शेष तो मात्र व्याख्याएँ हैं।''

पारसी मत- (दादीस्तान ए दिनिक 94.5) ''वह स्वभाव ही अच्छा है, जो दूसरों के साथ वह काम नहीं करता जो अपने लिए भी अच्छा नहीं है।''

चीन का कन्फ्यूशियस-(एनालेक्टस 15.23) ''दूसरों के साथ वह काम मत करो जो तुम दूसरों से अपने लिए नहीं चाहोगे।''

इस्लाम में- (20.40, हदीस 13) ''तब तक तुम सच्चे ईमानवाले नहीं हो, जब तक अपने भाई के लिए भी वह ही इच्छा नहीं करते, जो अपने लिए करते हो।''

किसी कवि ने भी इसी बात को बड़े सुन्दर शब्दों में इस प्रकार कहा है-

कभी भूल कर किसी से न करो ऐसा सलूक।
कि जो तुमसे कोई करता, तुम्हें नागवार होता॥

विश्व धर्म- यह तो रहा महर्षि व्यास द्वारा बताए धर्म का विस्तार। कोई भी निष्पक्ष विवेकशील पुरुष इसे खुले हृदय से स्वीकार किये बिना नहीं रह सकता कि विविध मत-पन्थों में महर्षि व्यास द्वारा दिए गए धर्म का सार ही प्रतिध्वनित हो रहा है अब तनिक नवीनता की बात करें। धर्म के नाम पर चलनेवाले एक दूसरे के विरोधी अभियान हर युग में सभी विवेकशील पुरुषों को काँटे की तरह चुभते रहते हैं। पूर्वकाल में जैसे धर्माचार्य व दार्शनिकों के परस्पर वार्तालाप होते और उनमें 'वादे वादे जयन्ते तत्वबोध:' के अनुसार कल्याणकारी निष्कर्ष निकाले जाते, ठीक इसी प्रकार के प्रयास विश्व के बुद्धिजीवी करते रहते हैं। धर्म के सम्बन्ध में ऐसे ही एक रोचक और अत्यन्त प्रेरणा देनेवाले एक ऐतिहासिक विवरण को प्रस्तुत करने का लोभ मैं भी नहीं रोक पा रहा हूँ। हर सच्चे लेखक की भावना होती है कि उसका पाठक प्रस्तुत विषय को भली-भाँति समझकर हृदयंगम कर ले। यह विश्वप्रसिद्ध घटना धर्म के मर्म को पूरी गहराई के साथ समझने और उसे आत्मसात करने में हर विवेकशील पाठक की भरपूर सहायता करेगी।

सन् 1893 का विश्व-धर्म सम्मेलन शिकागो में हुआ था। हम भारतीयों के लिए इसका विशेष महत्त्व इसलिए भी है कि उस सम्मेलन में भारतीय धर्म और दर्शन का प्रतिनिधित्व स्वामी विवेकानन्दजी ने किया था।

स्वामीजी के कारण इस सम्मेलन में भारतीय प्रतिभा की कीर्ति तो बहुत फैली, मगर वेद ज्ञान में पारंगत न होने के कारण स्वामी विवेकानन्दजी एक महान् इतिहास लिखने से सर्वथा चूक गए। उस सम्मेलन में विश्व के धर्माचार्य, दार्शनिक एवं वैज्ञानिकों ने मिलकर एक अभिनव प्रयास किया। उन्होंनें एक समिति बनाई जिसमें धर्माचार्य व दार्शनिकों के साथ वैज्ञानिक भी थे। उन सब ने मिलकर एक ऐसे विश्व-धर्म की सम्भावनाओं पर चिन्तन किया, जिसे सभी स्वीकार कर सकें तथा जो सच्चे अर्थों में विश्व-मानव का कल्याण कर सके । इस दिशा में गहन विचार करने पर उन्होंने सम्भावित विश्व-धर्म की चार कसौटियाँ निर्धारित कीं। उन्होंने एक स्वर से घोषणा की, कि जो भी धर्म इन चार कसौटियों पर खरा उतरेगा, वह विश्व-धर्म का सम्मान प्राप्त कर सकेगा। वे चार कसौटियाँ हैं- 1. समता, 2. विश्व व्यापी भ्रातृ भाव 3. सर्वांग पूर्ण विकास, 4. वैज्ञानिक आधार इन चार कसौटियों पर संक्षिप्त विचार करने के लिए आगे बढ़ने से पहले हम यह बताते चलें कि सम्मेलन में आए हुए किसी भी दार्शनिक व धर्माचार्य का धर्म व दर्शन इन चार कसौटियों पर खरा सिद्ध नहीं हुआ, जिनमें स्वामी विवेकानन्दजी भी सम्मिलित हैं। आज हमारे हृदय में एक टीस होती है कि शिकागो धर्म सम्मेलन में जाने से पहले स्वामी विवेकानन्दजी ने वेद पढ़ लिए होते, वैदिक धर्म की कीर्ति पताका विश्वपटल पर और अधिक ऊँची होकर तथा कुछ अधिक चमक के साथ लहरा रही होती। इन चार कसौटियों को समझें -

समता- समता का सीधा अर्थ समानता होता है। विश्व-धर्म का पहला गुण यह हो कि वह मनुष्य-मनुष्य में किसी प्रकार का भी भेद-भाव न करे। धार्मिक अनुष्ठान में, पूजा-पद्धति में, सामाजिक व्यवहार में तथा ईश्वर की पूजा-उपासना के अधिकार तक में सब को समान माननेवाला धर्म ही विश्व-धर्म हो सकता है।

विश्वव्यापी भ्रातृभाव- सबको समान मानने के बाद दूसरी बात आती हैं कि सबको अपना मानकर चलें। ऐसा धर्म जो विश्व के मानव मात्र को जाति, नसल तथा लिंगभेद में न बाँटकर सबको अपना समझने के उपदेश देनेवाला धर्म ही विश्व-धर्म बन सकता है। धर्म के नाम पर किसी भी प्रकार का भेद-भाव और अपने-पराये की भावना के रंग में रंगा कोई धर्म विश्वमानव को क्यों कर

स्वीकार होगा?

सर्वांगीण विकास- विश्व-धर्म की तीसरी विशेषता यह होनी चाहिए कि व मनुष्य की सर्वांगीण उन्नति एवं समग्र विकास की सैद्धान्तिक रूप-रेखा प्रस्तुत करता हो। मानव का शारीरिक विकास, बौद्धिक विकास, आत्मिक विकास, सामाजिक विकास आदि की सम्पूर्ण प्रक्रिया प्रस्तुत कर सकनेवाले धर्म को विश्वमानव नि:संकोच होकर उत्साहपूर्वक स्वीकार करेगा ही। सामाजिक संरचना के प्रत्येक क्षेत्र में काम करनेवाले डॉक्टर, वकील, किसान, व्यापारी व राजकाज में लगे विभिन्न लोगों से लेकर श्रमिक तक के सम्पूर्ण जीवन के विकास की व्यवस्था देनेवाले धर्म को विश्व-धर्म माना जाना समय की माँग है।

वैज्ञानिक आधार- विश्व धर्म चुने जाने की प्रतिस्पर्धा में विजयी होनेवाले धर्म के सम्पूर्ण सिद्धान्त, उसके धार्मिक अनुष्ठान व धर्म-सम्बन्धी अवधारणाएँ, मान्यताएं पूर्णत: वैज्ञानिक होनी चाहिए। **धर्म ग्रन्थों का विज्ञान के विरुद्ध होना संसार का सबसे बड़ा मानवीय अभिशाप है।** विज्ञान विरुद्ध तथ्यों की धर्म का नाम देकर प्रचारित-प्रसारित करना किन्हीं लोगों के लिए पेंट भरने का कुटिल अभियान तो हो सकता है, धर्म नहीं। 1893 के शिकागो विश्व-धर्म सम्मेलन में उपस्थित विश्व के सभी धर्माचार्य न तो ऐसा कह सके कि विश्व धर्म के लिए इन कसौटियों पर खरा सिद्ध कर सके । इसका अर्थ हुआ कि विश्व के समस्त मानव समुदाय का हित करनेवाला धर्म इन कसौटियों पर सौ प्रतिशत खरा सिद्ध होना चाहिए लेकिन धर्म के नाम पर विश्वपटल पर अपने-अपने अभियान चला रहे संसार के सभी कथित धर्मों में से एक भी ऐसा नहीं, जो इन कसौटियों पर खरा उतरने का साहस रखता हो।

1893 के विश्व धर्म सम्मेलन के इस अभिनव प्रयोग ने विश्व में प्रचलित सब तथाकथित धर्मों की पोल खोलकर रख दी। क्या यह उन समस्त धर्माचार्यों के लिए गौरव की बात कही जा सकती है कि वे न तो अपने धर्म को मानव समुदाय का सम्पूर्ण हित करने तथा सब मनुष्यों द्वारा स्वीकार करने योग्य बुद्धिमान सिद्ध कर सके और विश्वमानव के लिए कल्याणकारी बनाने की दिशा में अपने-अपने धर्मों के कोई सकारात्मक सुधार करने के लिए भी उन्होंने कोई उद्योग नहीं किया। धर्म के नाम पर ऐसी धाँधलेबाजी विश्व के समस्त बुद्धिजीवी लोग कब तक सहन करते रहेंगे और क्यों? यह एक ज्वलन्त प्रश्न है। प्रश्न यह भी है कि क्या भूगोल भर में ऐसा कोई धर्म

है भी, जो इन कसौटियों पर खरा उतर सके तथा मानव मात्र का सम्पूर्ण हित साधन कर सके? उत्तर हाँ में दिया जा सकता है, और नाम पूछनेवालों की सन्तुष्टि के लिए उस विश्व धर्म का नाम है- 'सत्य सनातन वैदिक धर्म, अथवा 'वैदिक धर्म'। बात वहीं आ जाती है कि कोई यह क्यों मान ले? मानना न मानना एक अलग बात है, लेकिन हम इन चारों कसौटियों पर वैदिक धर्म को शत-प्रतिशत खरा सिद्ध कर सकते हैं, फिर जिसको अपना और लोक समुदाय का कल्याण करना अभीष्ट है तो उसे स्वीकार कर लो, या फिर धर्म के नाम पर केवल अन्धविश्वासों और पाखण्डों का जाल फैलाकर या पेट-पूजकों द्वारा फैलाए गए जाल में फँसकर शोषण करते -कराते रहो।

वैदिक धर्म चूँकि परमेश्वर का दिया गया धर्म है और परमेश्वर सर्वज्ञ है तथा वह सब कुछ जानता है अत: वैदिक धर्म इन चारों कसौटियों पर खरा उतरता है। अल्पज्ञ मनुष्य गलती कर सकता है, मनुष्य से भूलचूक हो सकती है और भूलचूक में संशोधन की सम्भावनाएं सदा बनी रहती हैं। संसार के धर्म और धर्माचार्यों की सबसे विकट समस्या यह है कि वे अपने-अपने धर्म ग्रन्थों को ईश्वरीय ज्ञान मानकर चलते हैं, लेकिन ईश्वरीय ज्ञान जैसी निर्दोष विद्या और व्यवस्था उनमें कहीं नहीं दिखती। क्या ईश्वर जो ज्ञान देगा, वह विज्ञान विरुद्ध होगा? यदि नहीं तो क्या संसार की तथाकथित ईश्वरीय पुस्तकों में सृष्टि रचना की विज्ञान सम्मत विधि है? क्या तकनीकी शिक्षा, गणित, भूगोल, वनस्पति शास्त्र, चिकित्सा विज्ञान, समाज व्यवस्था, राजनीति, व्यापार एवं कृषि विज्ञान के दिशा निर्देशक तत्त्व वेद के अतिरिक्त किसी अन्य ग्रन्थ में हैं? यदि नहीं तो उन्हें क्योंकर मान लेगा? उनमें ईश्वरीय ज्ञान न होने पर भी मानव निर्मित ऐसे कथित धर्म ग्रन्थों में संशोधन के लिए तैयार न होना एक घातक कटटरपन के अतिरिक्त कुछ भी नहीं। वेद में कहा है- **'अपक्रमन्पौरुषेयाद् वृणानों दैव्यं वचः'** (अथर्व॰ 7.105.1) अर्थात् मानवीय वचनों से आगे बढ़कर दैवीय वचनों को स्वीकार करो। वेद सच्चे अर्थों में दैवीय वाणी है, ईश्वरीय ज्ञान है, उसे धर्म के रूप में स्वीकार करने में ही कल्याण है। शिकागो के धर्म सम्मेलन में जो चार कसौटियाँ रखी गई थीं उन चार ही नहीं, विश्वकल्याण की सच्ची भावना को लेकर विश्व धर्म के लिए जितनी भी उचित कसौटियाँ जब कभी बनाई जाएंगी, वेद इस प्रकार की सभी कसौटियों पर सदा खरा सिद्ध होगा। परमात्मा ने हमारे कल्याण के लिए इस विश्व को रचा है, हमारे कल्याण के लिए ही

उसने वेद का पावन ज्ञान दिया है। ईश्वरीय ज्ञान की गहराई को मानवीय कसौटियाँ कैसे माप सकेंगी। मानव की कसौटियों पर ईश्वरीय ज्ञान खरा न उतरे ऐसा कैसे हो सकता है? आओ हम इन कसौटियों को पूर्ण करनेवाले कुछ वेद मन्त्रों का आनन्द लेते हैं-

समता-शिकागो धर्म सम्मेलन द्वारा विश्व धर्म के मानक तय करने के लिए धर्माचार्यों, दार्शिनिकों तथा वैज्ञानिकों की जो समिति बनी, उसने विश्व धर्म की प्रथम कसौटी के रूप में समता को रखा। मानव-मानव के बीच किसी प्रकार का भेदभाव न करते हुए सब के लिए व्यक्तित्व विकास से लेकर जीवन में आगे बढ़ने के लिए समान अवसर प्रदान करना सम्भावित विश्वधर्म की पहली विशेषता होनी चाहिए। नि:संदेह वैदिक धर्म इस कसौटी पर पूरी तरह खरा उतरता है। सर्वप्रथम हम ऋग्वेद को ही लेते हैं- **''अज्येष्ठसो अकनिष्ठास एते सं भ्रातरो वावृधुः सौभगाय।''** (5.60.5)।

यहाँ बड़े सुन्दर शब्दों में कहा है कि कोई बड़ा नहीं और कोई छोटा नहीं, यहाँ सभी भ्रातृभाव के साथ, परस्पर स्नेह और अपनेपन के साथ सौभाग्य बढ़ाने की शिक्षा दी गई है। कई लोगों का आरोप है कि वेद वर्ण व्यवस्था देकर समाज को बाँटता है। किसी को ब्राह्मण कहकर विद्या पढ़ाने व यज्ञ कराने का अधिकार देता है, तो किसी को क्षत्रिय कहकर राज-व्यवस्था का अधिकार देता है। इसी प्रकार वैश्य को खेती-बाड़ी, पशुपालन व व्यापार करने की बात कहता है, तो किसी को शूद्र कहकर केवल सेवा और मजदूरी में ही लगे रहने की बात कहता है। यह समता कहाँ हुई? यह आरोप वेद को न समझ पाने के कारण अज्ञानतावश लगाया जाता है। वर्ण-व्यवस्था तो एक सामाजिक श्रम-विभाजन मात्र है श्रम-विभाजन किए बिना कोई समाज -संरचना इस अपराध से मुक्त नहीं होगी, क्योंकि एक विद्यालय के (चपरासी) सेवक को प्रधानाध्यापक की कुर्सी पर बिठाना किसी के लिए कभी संभव न होगा। योग्यता के अनुसार काम का विभाजन न किया जाए तो यह विषमता पैदा करनेवाला कार्य होगा। शिक्षा देकर योग्य बनाने में किसी धनी-निर्धन या छोटे-बड़े का भेदभाव वैदिक धर्म को स्वीकार नहीं है। महर्षि दयानन्द लिखते हैं- 'सबको तुल्य वस्त्र, खान-पान, आसन दिए जाएँ,चाहे वह राजकुमार व राजकुमारी हो, चाहें दरिद्र की सन्तान हो।' आज तो फिर भी शिक्षा में धनी और निर्धन का अन्तर स्पष्ट दिखता है, वेद इस बात को स्वीकार नहीं करता।

कई लोग यह कहते हैं कि धर्म के नाम पर ब्राह्मण और शूद्रों में धरती आकाश जैसा अन्तर है। ब्राह्मण शूद्र को छूना तक पसन्द नहीं करते। शूद्रों की छाया पड़ने तक से उनका धर्म नष्ट हो जाता है। ऐसे भेदभाव और पक्षपात के रहते वैदिक धर्म समता का दावा कैसे कर सकता है? हाँ, यह सच है कि विगत 3-4 हजार वर्षों से धर्म के नाम पर यह सब कुछ होता चला आ रहा है, दुर्भाग्य से उसके अवशेष आज भी जहाँ-तहाँ मिल जाते हैं, लेकिन इन दोषों के लिए वेद या वैदिक धर्म को आरोपित नहीं किया जा सकता। वेद इस ऊँच-नीच और छूआछूत के समर्थक न होकर प्रबल विरोधी है। वेद में कहा है- **'रुचं नो धेहि ब्राह्मणेषु रुचं राजसु नस्कृधि। रुचं विश्येषु शूद्रेषु मयि धेहि रुचा रुचम्॥'** (यजु॰ 18.48) मेरी ब्राह्मणों के साथ प्रीति हो, क्षत्रियों के साथ प्रीति हो, वैश्यों के साथ प्रीति हो, शूद्रों के साथ प्रीति हो। हे प्रभो! आप मेरे हृदय में सबके प्रति प्रेम दीजिए। अथर्ववेद में भी ऐसा ही मन्त्र आता है जो समता की ऊँची शिक्षा देता है- **'प्रियं मा कृणु देवेषु, प्रियं राजसु मा कृणु। प्रियं सर्वस्य पश्यत उत शूद्रे उतार्ये॥** (19.62.1) मुझे विद्वानों (ब्राह्मणों) का प्रिय कर दो। मुझे क्षत्रियों का प्रिय बना दो, वैश्य तथा शूद्र आदि से लेकर मुझे सबका प्रिय बना दो। अथर्ववेद में अन्यत्र **'प्रियं मा दर्भ कृणु ब्रह्म राजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च'** (19.32.8) भी ब्राह्मण राजन् एवं शूद्र सबका प्रिय बनने की बात कही है। महर्षि दयानन्द सत्यार्थप्रकाश में लिखते हैं- चारों वर्ण परस्पर प्रीति, उपकार, सज्जनता, सुख-दुःख, हानि-लाभ में एकमत्य रहकर राज्य और प्रजा की उन्नति में तन, मन, धन, व्यय करते रहें। इस प्रकार यही भली-भाँति सिद्ध हो जाता है कि वैदिक धर्म समता की प्रथम कसौटी पर पूर्णतः खरा उतरता है। वेद के नाम पर होनेवाले किसी अवैदिक काम के लिए वेद को दोषी नहीं माना जा सकता।

2. विश्वव्यापी भ्रातृभाव- दूसरी कसौटी विश्व धर्म के लिए रखी गई कि वह मानवमात्र के प्रति रस (आत्मीयता) का भाव रखते हुए सबको भाई मानकर चले। अपनेपन के बिना समता का क्या मोल? समता का मूल्य अपनेपन से ही टपकता है, इसलिए दूसरी कसौटी पर भी पूर्णतः खरा उतरता है। अथर्ववेद में कहा है- **'माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः '** (12.1.12) अर्थात् यह विशाल भूमि मेरी माँ है और मैं पृथ्वी का पुत्र हूँ वैदिक साहित्य में पृथ्वी को माता कहने की गौरवमयी परम्परा है। मैं पृथ्वी को माता कहता हूँ, तो संसार के किसी मनुष्य को

इस धरती को माँ कहने से मैं कैसे रोक सकता हूँ? जिस कारण से मैं माँ कह रहा हूँ, उस कारण से प्रत्येक मानव इस धरती को माँ कहने का अधिकार रखता है। जो व्यक्ति धरती को माँ कहने का अधिकार रखता है, वह मेरा भाई हुआ या नहीं? जिस प्रकार मैं पृथ्वी का पुत्र हूँ, वह मेरा भाई हुआ या नहीं? जिस प्रकार मैं पृथ्वी का पुत्र हूँ, उसी प्रकार हर मनुष्य पृथ्वी का पुत्र है। हम इस पृथ्वी के पुत्र होने के कारण भाई-भाई ही हुए।

अपनेपन की सीमा मित्रता में बसती है। वैदिक धर्म के अनुसार अर्धांगिनी (पत्नी) को 'सखे सप्तपदी भव' कहकर सम्बोधित किया जाता है। मित्र शब्द 'ञिअमिदा स्नेहने' धातु से बनता है। परस्पर का स्नेह मित्रता की अटूट ग्रन्थि है। मित्रता स्वार्थपूर्ति का माध्यम नहीं, मित्रता स्नेह का बन्धन है, मित्रता अपनेपन की पराकाष्ठा है। वेद का मित्रभाव देखिए- **'मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्, मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।'** (यजु० 36.18) संसार के सब प्राणी मुझे मित्र (स्नेह) की दृष्टि से देखें, मैं सबको मित्र की दृष्टि से ही देखता हूँ, हम सब एक दूसरे को मित्र की दृष्टि से देखें। यहाँ किसी प्रकार का भेदभाव और पक्षपात नहीं दिख रहा। मनुष्यों की ही बात नहीं, बल्कि प्राणीमात्र के प्रति स्नेहपूर्ण दृष्टि रखने, व्यवहार करने की शिक्षा वेद देते हैं। अथर्ववेद तो समस्त पृथ्वी को एक परिवार की तरह मानकर प्रेम से रहने की शिक्षा देता है। **''जनं बिभ्रती बहुधा विवाचसं नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम्।''** (12.1.45) मन्त्र में कहा है- बहुत भाषाएँ बोलनेवाले, अनेक प्रकार के धर्मों का पालन करनेवाले लोगों को पृथ्वी अपने अन्दर ऐसे आश्रय देकर रखती है, जैसे कि एक परिवार के लोग रहते हो। 'उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्' की पावन शिक्षा इस वेद मन्त्र की छाया में दी ही गई लगती है। यहाँ तक बात तनिक स्पष्ट करनेवाली है। वेद -नाना धर्माणम्' अर्थात् अनेक धर्मवाले कहता है। तो क्या धर्म अनेक हो सकते हैं? हाँ जब वेद कहता है तो धर्म अनेक क्यों नहीं हो सकते? यहाँ धर्म का अर्थ कर्त्तव्य कर्म है। किसी मनीषी ने लिखा है- **''सीमानो नाऽतिक्रणं यत्तद्धर्मम्'** अर्थात् मनुष्य अपनी मर्यादा का अतिक्रमण न करे, यही उसका धर्म है। मनुष्य पारिवारिक व राष्ट्रीय और वैश्विक मर्यादाओं में बँधा हुआ है। एक डॉक्टर और अध्यापक के सामाजिक व राष्ट्रीय कर्त्तव्यों में जो अन्तर है, वहीं उनका धर्म है। डॉक्टर का धर्म व राष्ट्रीय कर्त्तव्यों में जो

अन्तर है, वही उनका धर्म है। डॉक्टर का धर्म जहाँ रोगी को स्वास्थ्य लाभ पहुँचाना है, वहीं एक अध्यापक का धर्म अज्ञान को दूर कर ज्ञान का प्रचार-प्रसार करना है। एक सैनिक का धर्म राष्ट्र की रक्षा करना है। एक वकील का धर्म न्याय दिलाना है। हत्या करनेवाले से मोटी रकम लेकर उसे दण्ड से बचानेवाला वकील धर्मभ्रष्ट माना जाता है। इस प्रकार अनेक प्रकार के सामाजिक उत्तरदायित्वों (धर्मों) का पालन करनेवाले सब लोग इस धरती पर परिवार की तरह रहें, यह वेद की शिक्षा करनेवाले सब लोग इस धरती पर परिवार की तरह रहें, यह वेद की शिक्षा है दूसरी कसौटी -विश्वव्यापी भ्रातृभाव' पर भी वैदिक धर्म खरा उतरता है।

3. **सर्वांगीण विकास**- सर्वांगीण विकास को दो भागों में बाँटकर सरलता से समझ सकेंगे। प्रथम व्यक्ति का सर्वांगीण विकास और दूसरा समाज, राष्ट्र का सर्वांगीण विकास। व्यक्ति के सर्वांगीण विकास का अर्थ है- उसका शारीरिक, मानसिक, आत्मिक एवं आर्थिक विकास तथा समाज और राष्ट्र के सर्वांगीण विकास का आशय है, राष्ट्र में बसनेवाले सब लोगों का विकास। सैनिक हैं, किसान हैं, व्यापारी हैं, मजदूर हैं, तथा विभिन्न प्रकार के विविध क्षेत्रों में काम करनेवाले सब नागरिकों का सम्यक् विकास। वेद इस सम्बन्ध में बड़ी सुन्दर एवं समग्र रूप-रेखा प्रस्तुत करता है- **''दिवं च रोह पृथिवीं चं रोह, राष्ट्रं च रोह द्रविणं च रोह। प्रजां च रोहामृतं च रोह, रोहितेन तन्वं सं स्पृशस्व॥''** (अथर्व॰ 13.1. 34) मन्त्र में शिक्षा दी गई है- हे मनुष्य् तू आध्यात्मिक उन्नति कर, भौतिक, शारीरिक उन्नति कर, राष्ट्रीय उन्नति कर, आर्थिक उन्नति कर, प्रजा की उन्नति कर, मोक्ष प्राप्ति के लिए अपने आत्मा को परमात्मा के साथ स्पर्श करा ले, जोड़ ले। वेद की शिक्षा कितनी निराली है, कितने निराले हैं, वेद के ये उपदेश? एक ही मन्त्र में मानव के सर्वांगीण विकास की रूप-रेखा प्रस्तुत कर दी है। यह तो रही व्यक्तिगत उन्नति की बात, लेकिन राष्ट्रीय उन्नति के बिना व्यक्तिगत उन्नति का कोई मूल्य नहीं। इसलिए वेद- 'राष्ट्रं च रोह' और 'प्रजां च रोह' की बात भी कहता है। यद्यपि यहाँ 'प्रजा च रोह' का मूल भाव सन्तान की दृष्टि से उन्नति करना है, लेकिन 'प्रजा' का अर्थ राजा की दृष्टि से एक सामान्य नागरिक भी है, राजा प्रजा के सर्वांगीण विकास की घोषणा करता है- **'सवित्रा प्रसवित्रा, सरस्वत्या वाचा, त्वष्ट्रा रूपैः पूष्णा पशुभि रिन्द्रेणास्मे बृहस्पतिना ब्रह्मणा........प्रसूतः प्रसर्पामि॥'** (यजु॰ 10. 30) राजा कहता है कि मैं सविता (प्रेरक) बनकर समग्र राष्ट्र को, सम्पूर्ण नागरिकों की

अपने-अपने कर्त्तव्य कर्मों में प्रेरित करूँगा। विद्या एवं भाषा का विकास राष्ट्र की सुख समृद्धि का मूल है।

'त्वष्ट्रारूपैः' त्वष्ट्रा का अर्थ रचनाकार-देश के विभिन्न उत्पादकों की सहायता से मैं राष्ट्र को सुन्दर रूप प्रदान करूँगा। निर्माण विकास की धुरी है, कला कौशल, विभिन्न प्रकार के कलात्मक भवन, नगर, पुल और सड़कें बनाकर राष्ट्र के रूप को संवारना राष्ट्रीय उन्नति है **'पूष्ण पशुभिः'** पूषा का अर्थ पालक-पोषक है, राजा कहता है कि मैं पशुओं का पालन-पोषण करनेवाला बनूँगा। **'इन्द्रेणास्मे'**-इन्द्र वीरता और ऐश्वर्य का प्रतीक है। राजा कहता है कि मैं अपने राष्ट्र में वीर सैनिकों के द्वारा शत्रु संहार करके राष्ट्र की समृद्धि को नित्य बढ़ाता रहूँगा।

'बृहस्पतिना ब्रह्मणाः' बृहस्पति ज्ञान-विज्ञान का अधिपति है। ज्ञान का अधिपति बनकर राजा या शासक राष्ट्र में विद्वानों, बुद्धिजीवियों की संख्या बढ़ाकर ज्ञान-विज्ञान में उच्च कीर्तिमान बनाए। **'वुरणेनौजसा'** - वरुण दण्डधर है। राजा दण्डनायक बनकर अपराधी प्रवृत्ति के प्रजा पीड़क लोगों को अपने ओज-तेज से नष्ट करके अपना वर्चस्व स्थापित करें। **'अग्रिना तेजसा'**- अग्नि, प्रकाश और ऊर्जा का स्त्रोत है, राजा कहता है कि मैं अपनी प्रजा में उत्साह, ऊर्जा और निरन्तर ऊपर उठने की प्रवृत्ति पैदा करूँगा। मैं, मेरा राष्ट्र, मेरी प्रजा अग्नि की लपेटों की तरह निरन्तर ऊँचे उठते रहेंगे। हम राष्ट्र, मेरी प्रजा अग्नि की लपटों की तरह निरन्तर ऊँचे उठते रहेंगे। हम राष्ट्र को तेजस्वी बनाएँगे।

'सोमेन राज्ञा' केवल अग्नि के तेज से काम नहीं चलता, गर्मी के साथ शीतलता, शान्ति व सौम्यता भी चाहिए। सज्जनों के साथ मेरा व्यवहार सौम्यता पूर्ण होगा। सज्जनता मेरे राष्ट्र में खूब फूले फलेगी।

'विष्णुनादशम्या देवतया प्रसूतः प्रसर्पामिः'- दशमें देव विष्णु से प्रेरित होकर मैं राज्य व्यवस्था को चलाऊँगा। विष्णु का अर्थ होता है व्यापक। यद्यपि राजा एक स्थान पर रहता है, लेकिन उसका प्रभाव उसकी पहुँच, उसके गुप्तचर पूरे देश में विचरण करते रहते हैं। राष्ट्र में कहीं किसी प्रकार की अव्यवस्था नहीं हो, कहीं कोई उपद्रव, आतंक, सिर न उठा सके, इसके लिए राजा विष्णु की तरह व्यापक जैसा होकर पूरे देश में स्वशक्तियों के माध्यम से विचरण करता है। कहने की आवश्यकता नहीं कि वैदिक धर्म सर्वाड़ीण विकास की कसौटी पर भी खरा उतरता है।

4. वैज्ञानिक आधार- धर्म की परिभाषा एव व्याख्या करते समय भली-भाँति प्रकट किया जा चुका है कि वैदिक धर्म का सम्पूर्ण कलेवर ही सत्य की नींव खड़ा है और सत्य की वैज्ञानिकता पर किसे सन्देह होगा? सत्य तो विज्ञान का लक्ष्य है, विज्ञान की दौड़ की परिधि ही सत्य है। शिकागो धर्म सम्मेलन में विश्व-धर्म की चौथी कसौटी 'वैज्ञानिक आधार' मानने के पीछे यही सोच रही होगी कि विश्व धर्म के गौरव से विभूषित धर्म के समस्त सिद्धान्त, समस्त धारणाएँ और कर्मकाण्ड या धर्मानुष्ठान विश्वसनीय एवं तर्कसम्मत हों, बुद्धिगम्य हों, उनमें अन्धविश्वास जैसी कोई बात नहीं हो। सब कुछ सुलझा हुआ और सटीक हो। धर्म के सिद्धांत विज्ञान के सिद्धांतों की तरह अटल एवं बुद्धिजीवियों के लिये स्वीकार्य हो। वैदिक धर्म में ये सब विशेषताएं हैं, हम तो इससे आगे बढ़कर साहसपूर्वक कहना चाहते हैं कि वैदिक धर्म उन सत्यों को उद्घाटित करने एवं प्रमाणित करने की क्षमता रखता है, जो आज विज्ञान की परिधि से बाहर प्रतीत हो रहे हैं।

शेष अगले अंक में

स्वर्ण जयन्ती समारोह
आर्य समाज (गुलमेहियाबाग)

आर्य समाज, बंकाघाट पटना का स्वर्ण जयन्ती समारोह दिनांक 26,27,28 नवम्बर 2013 को बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। कार्यक्रमों में प्रत्येक दिन पं॰ अशर्फी लाल शास्त्री, आचार्य गुरूकुल सिराथु (उ॰ प्र॰) के ब्रह्मत्व में यज्ञ सम्पन्न हुआ जिसमें अनेकों वैदिक विद्वानों के द्वारा भजन, प्रवचनों वे द्वारा वैदिक धर्म का प्रचार प्रसार किया गया। कार्यक्रम का शुभारंभ यज्ञोपरान्त श्री नागेश्वर सहाय जी प्रधान स्थानीय आर्य समाज ने ध्वजारोहण कर प्रातः कालीन कार्यक्रम का शुभारम्भ मुख्य अतिथि आदरणीय गंगा प्रसाद जी प्रधान बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा पटना ने दीप प्रज्वलित कर किया। इस अवसर पर विशिष्ट अतिथि के रूप में श्री रमेन्द्र कुमार गुप्ता जी, मन्त्री बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा का सानिध्य प्राप्त हुआ।

इनके अलावा अन्य पधारे हुए विद्वानों एवं आर्य श्रोताओं में स्वामी नित्यानन्द सरस्वती, श्री दयानन्द सत्यार्थी, धर्मरक्षिता आर्या, श्री विनोद कुमार शास्त्री, प्रो॰ सत्येन्द्र कुमार आर्य, श्री लक्ष्मण प्रसाद आर्य आदि महानुभावों का विशेष सहयोग प्राप्त हुआ।

अखण्ड भारत

मेरे सपनों के भारत से साभार — -स्व॰ पं॰ प्रकाशवीर शास्त्री

पिछले अंक का शेष भाग...

जहां तक दोनों देशों की जनता द्वारा एकीकरण का प्रश्न उठाये जाने की मांग है सो जनता ने तो पृथक्करण (विभाजन) को भी कभी मत नहीं दिये यह तो कुछ नेताओं के ही आन्दोलन थे। साधारण जनता तो दोनों देशों की आज भी खिन्न है जिनके शताब्दियों से चले आ रहे सम्बन्ध नाते और जीवन निर्वाह के साधन विश्रृंखलित हो गये। और यदि थोड़ा बहुत पागलपन किन्हीं मस्तिष्कों में था भी तो वह अब इन थपेड़ों को खा-खाकर ठीक हो गया इसलिए जनता तो अब विभक्त रहना ही नहीं चाहती। कुछ कर्त्तव्य भारत के उस बहुमत का एक और भी है जो अपने को हिन्दू कहता हैं, वह अपनी पाचनशक्ति को अब जरा मजबूत बनाये और इस कार्य में आर्यसमाज से अपना पथ प्रदर्शन प्राप्त करे। भारत के मुसलमान अरब और मिश्र से नहीं आये हैं मेव-मलकाने-खोजा -बोहरे-लालखानी आदि सब मुसलमान यहीं का रक्त और इन्हीं हिन्दुओं के वंशज हैं। किसी चिढ़ाने अथवा और किनहीं भावनाओं से नहीं अपितु सात्विक और भावी सुख की भावनाओं से प्रेरित होकर उन्हें अपने में मिलाने के वातावरण तय्यार कर कहा जाय- देखों भाई किन्हीं लाचारियों में हम तुम पृथक् हो गये थे आओं आज फिर गले लगकर स्वाधीन भारत में वेद ध्वनि करें और अपनी भारत माता की रक्षा करें। भारतीय मुसलमान यदि सही मार्ग पर आ जायें और स्थायी-सुख और शान्ति के साथ रहते हुए चैन के दिन व्यतीत करने लगें तो पाकिस्तानी-मुसलमान स्वयं बेचैन हो उठेंगे और कहेंगे हम अपने भाइयों से पृथक् रहकर विदेशी संस्कृति के ऋणी नहीं बनना चाहते जब हमारा भारतीय भण्डारपूर्ण है तब क्यों हम दूसरों के आगे हाथ फैलायें, हम एक होकर ही भारतमाता की जयघोष करेंगे।

जैसा कि-पीछे हम लिख चुके हैं कोई बहुत बड़ा प्रयास नहीं करना केवल मनोवृत्तियों को केन्द्र बिन्दु बदलने की आवश्यकता है, उसके परिवर्तित होते ही सारी समस्यायें सुगमता से सुलझाई जा सकती है। पर हां! मनोवृत्ति बदलने वालों की मनोवृत्ति को बदलना अवश्य

प्रयास साध्य है वह इसे साम्प्रदायिकता और रूढ़िवादों की जटिल जंजीरों से ऊपर उठाकर ही करेंगे तब इसमें सफलता निश्चित है। मालाबार में मोपला काण्ड होने के बाद जो लहर शुद्धि आन्दोलन की देश में चली थी उस समय यदि यह साम्प्रदायिक और रूढ़िवादी मस्तिष्क आर्यसमाज का साथ दे देते तो आज देश का वर्तमान कुछ और ही होता।

नेहरू जी को भी भारत के शक्तिशाली होने पर विश्वास है। अभी पीछे नवम्बर में जब वह बनारस के राजनैतिक सम्मेलन में जाते हुए लखनऊ उतरे तब लखनऊ के कुछ पत्रकारों ने उनसे प्रश्न किये। भारत को किस अर्थ में आप शक्तिशाली समझते हैं? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए नेहरू जी ने और बातों के अतिरिक्त यह भी कहा-हमारे देश की भौगोलिक स्थिति हमारे अनुकूल है और वर्तमान विकट संघर्ष को देखते हुए ऐसा अनुभव होता है, हम इस स्थिति के कारण अपनी शक्ति और भविष्य उज्जवल बनाये रख सकेंगे। परमात्मा करे नेहरू जी के यह स्वप्न पूरे हों। परन्तु ऐसा है नहीं।

अपने देश की भौगोलिक स्थिति की कल्पना करने में नेहरू जी अखण्ड भारत के टुकड़े पाकिस्तान को या तो बिल्कुल भूल जाते हैं या फिर उसे खण्डित भारत का परम विश्वसनीय और सहायक मित्र मान लेते हैं। पण्डित जी क्या यह नहीं जानते ब्रिटिश सरकार के इशारों और अपनी दुर्बलताओं से जिस पाकिस्तान की सृष्टि हुई हैं उसका उद्देश्य भारत को आरक्षित, और सदैव चिन्तित बनाये रखना है। ब्रिटिश सरकार की यह मनोवृत्ति देश के विभाजन के बाद की घटनाओं से और भी स्पष्ट होती है। कश्मीर की समस्या को भी भारत के प्रतिकूल और पाकिस्तान के अनुकूल करने में एंग्लों अमेरिकी गुट का कैसा हाथ रहा यह भी कोई गुप्त रहस्य नहीं है। पाकिस्तान का देर तक रहना कहां तक हितकर है अथवा वह भारत का मित्र या सहयोगी बनकर रह सकेगा यह बात तो पिछले पांच वर्षों की शरणार्थी समस्या, दोनों देशों की व्यापारिक समस्याएं, सीमा प्रदेशों के छुट-छुट हमले, अतिक्रमण तथा पूर्वी पाकिस्तान की गुण्डागर्दी की घटनाओं से प्रमाणित हो गई है। पाकिस्तान के अन्दर जो कुछ भी हो रहा है जैसा स्वयं नेहरू जी ने दिसम्बर के तीसरे सप्ताह में संसदीय कांग्रेस दल की मीटिंग में कहा है उस देश के राजनीतिज्ञों का इरादा देर तक भारत को शान्ति

के साथ काम करते रहने देने का नहीं है। हाल में उस देश में एंग्लो-अमेरिकी गुट की ओर से जो संगठित प्रयत्न होने के समाचार आयें हैं उनसे भी क्या भारतवासी यह नहीं जान सकते कि-पाकिस्तान के कारण भारत की भौगोलिक स्थिति निश्चिन्तता की अपेक्षा संकट का कारण बन गई है? भारत के भूतपूर्व सेनापति जनरल आचिनलेक, पूर्वी बंगाल के अन्तिम अंग्रेज गवर्नर बोत्र आदि के व्यापारिक उद्देश्यों से पाकिस्तान पहुंचना क्या रहस्य रखता है ? क्या इसके उत्तर में भी यही कहा जायेगा भारत की भौगोलिक स्थिति को और अधिक निरापद बनाने के लिये ही यह परोपकारी महानुभाव कष्ट उठा रहे है !

करांची का ही 26 नवम्बर का समाचार है पाकिस्तान को कम्युनिस्टों के विरुद्ध मध्यपूर्व का गढ़ बनाने के लिए अमेरिका से शस्त्रास्त्र प्रचुर मात्रा में आ रहे हैं। पाकिस्तान को हिन्द महासागर के मार्ग से यह सहायता प्राप्त होने की सम्भावना बताई गई है। हाल ही में पाकिस्तान में दो प्रमुख अधिकारियों का आगमन हुआ है, एक तो है प्रशांत महासागर स्थित अमेरिकी सेना के भूतपूर्व अधिपति एडमिरल रेडफोर्ड और दूसरे अमेरिकी प्रतिरक्षा विभाग के उपमन्त्री हैं। सुनते हैं पाकिस्तान भविष्य में पश्चिमी देशों के ही गुट के साथ अधिकाधिक रहेगा। यदि ऐसा है तब तो एशिया-भूमध्य सागर प्रशान्त महासागर मध्य तथा पूर्व के क्षेत्रों से साम्यवाद को हटाने के नाम पर पश्चिमी गुट पाकिस्तान को अतुल सैनिक सामग्री दे सकेंगे और मनचाही संख्या में विमानों के अड्डे बना सकेंगे। फिर एक बार पैर जमाने के बार प्रबल पश्चिमी राष्ट्रों को हटाने का साहस एक क्या दस पाकिस्तान भी नहीं कर सकेंगे। क्या नेहरू जी वह समझ रहे हैं यह सब तैयारी आने वाले महायुद्ध का ध्यान रखे बिना की जा रही है? हम जानते हैं नेहरू जी इतने तो भोले नहीं है। पाकिस्तान का दकियानूसी ढांचा, प्रगति विरोधी प्रवृत्ति, भारत के प्रति द्वेष भावना सभी गुण आंग्ल अमेरिकी गुट के अनुकूल पड़ते हैं। सब जानते हैं इस समय संसार दो गुटों में बंटा हुआ है। और दोनों ही गुट अपने लिए छोटे-मोटे सहयोगी अधिक से अधिक खोज रहे हैं। पाकिस्तान को एंग्लो-अमेरिकी गुट अपने में मिलाने का प्रयास कर रहा है यह बात उतनी आचर्यजनक नहीं जितनी यह सब देखकर भी नेहरू जी का यह विश्ववास करना

आश्चर्यजनक है कि भारत को किसी ओर से भी कोई खतरा नहीं और उसकी सीमायें सुरक्षित हैं तथा यह भी सर पर मंडरा रहे महायुद्ध में भारत को बलपूर्वक घसीटने में यह स्थिति इस गुट की सहायक न होगी। भौगोलिक दृष्टि से सुरक्षा की चर्चा करते समय यह नहीं भूल जाना चाहिए कम्युनिज्म उत्तर की सीमा से तिब्बत में मुंह निकाल कर इधर झांक रहा है। कुछ दिन पूर्व ही उत्तर प्रदेश के प्रमुख मन्त्री श्री पन्त जी ने कहा था कि पहले की तरह अब उत्तर की सीमा सुरक्षित नहीं है, अल्मोड़ा जिले तक में कम्युनिस्टों के गुप्तचरों के फैलने के समाचार मिलते रहते हैं। उत्तर से साम्यवाद और पश्चिम से पूंजीवाद दो परस्पर संघर्षरत प्रवृत्तियां आगे बढ़ रही हैं तीसरे बीच में वह आग जो तुफानी लपटों से ऊपर उठ रही थी अब फिर धुंआ देने लगी है ऐसे में भारत को शक्तिशाली राष्ट्र समझकर शांति की सांस लेना कहां तक हितकर है? भारत की भौगोलिक सीमायें भी उसी स्थिति में तो हितकर है जो प्रकृति ने इसकी सुरक्षा को प्रदान की हैं और स्वयं अपने हाथों से उस अखण्ड रूप का निर्माण किया है।

महर्षि के ग्रन्थों का पठन-पाठन

श्रेष्ठ पुरुषों महर्षि ज्ञान को प्राप्त करें। अज्ञान मे बचने के लिये एक ही उपाय है, महर्षिकृत ग्रन्थों का पठन-पाठन। शताब्दी के महापर्व पर हम व्रत लेकर जावें कि हमें कम से कम 5 आर्य विचारों के विद्यार्थी अवश्य ही तैयार करने हैं। यह कार्य तभी सम्भव हो सकेगा, जब हम महर्षिकृत ग्रन्थों का ही पठन-पाठन का संकल्प लेवेंगे। इसके लिये प्रथम 5 से 8 वर्ष के बालकों को आर्य समाज के 10 नियम संक्षिप्त व्याख्या सहित, पुनः पढ़ाना है। नित्य संध्या यज्ञोपासन विधि महर्षिकृत ग्रन्थानुसार। इसके लिये महर्षि का दिव्य संदेश यहां है, सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास में कि- ''माता, पिता आचार्य अर्थ सहित गायत्री संध्योपासना की जो स्नान आचमन, प्राणायाम की क्रिया है, सिखलावें।'' इससे आगे संस्कार विधि का सम्पूर्ण सामान्य प्रकरण भूमिका से मंगल कार्य तक पढ़ाना है जो जिससे वर्तमान में जो पुरोहितों की समस्या उपस्थित है, उसका निराकरण हो सके। जहाँ महर्षि का यह सन्देश है कि- ''इतना तो अवश्य ही पढ़ लेवें।'' सो हमें संस्कार विधि से ही पढ़ना है अन्य पण्डितों वा प्रकाशकों की पद्धति से नहीं।

आर्यसमाज की सदस्यता

राधेमोहन आर्य उपाध्याय पुरस्कार समिति, इलाहाबाद

श्रद्धेय पण्डित गंगाप्रसाद उपाध्याय सिद्धान्तरूप से यह मानते थे कि जो आर्य व्यक्ति आर्यसमाज के सिद्धान्तों को मानते हैं अथवा वे आर्य परिवार के युवक जो 18 वर्ष के हो जायें उनको आर्यसमाज का सदस्य अवश्य बन जाना चाहिए, और उन्हें आर्यसमाज के सत्संग में भी भाग लेना चाहिए। उनके ज्येष्ठ पुत्र डॉ॰ सत्यप्रकाश जो बाद में स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती के नाम से प्रख्यात हुए, वे अपनी आयु के दिन गिनते थे। जिस दिन वे 18 वर्ष के पूरे हुए उसी दिन आर्यसमाज की सदस्यता का फार्म भरकर आर्यसमाज के सदस्य बने और आर्यसमाज के सत्संग में नियमित रूप से भाग लेते रहे हैं। वे जब इलाहाबाद विश्वविद्यालय में रसायनशास्त्र विभाग के अध्यक्ष बने, तब भी आर्यसमाज के सत्संग में आने का क्रम चलता रहा है। जब उन्होंने संन्यास की दीक्षा ली उसी दिन आर्यसमाज की सदस्यता से त्याग पत्र दे दिया। जब तक वे सदस्य रहे अपनी आय का शतांश नियमित रूप से देते रहे है। एक दिन की घटना है कि डॉ॰ सत्यप्रकाश के छोटे भाई विश्वप्रकाश के कनिष्ठ पुत्र श्री विनोद कुमार ने शिक्षा विभाग के एक उच्च पद से अवकाश प्राप्त किया एक दिन जब मैं पण्डितजी से पढ़ रहा था, उस समय अचानक विनोदकुमारजी भी आकर बैठ गये। उस समय उनकी आयु लगभग 19 वर्ष रही होगी। पण्डितजी ने मुझसे पूछा, क्या आपने विनोदकुमार को आर्यसमाज का सदस्य बना लिया है? मैंने कहा "अभी नहीं।" पण्डितजी ने कहा, "अरे भाई अब ये बालिग हो गये हैं अब तो इनको आर्यसमाज का सदस्य बना लीजिए", मैंने अच्छा कहकर उसे स्वीकार कर लिया। एक दिन विनोदकुमारजी अपने पिता श्री विश्वप्रकाशजी के पास बैठे थे, तब मैंने कहा कि विनोदजी आप आर्यसमाज के सदस्य बन जाइए और फार्म भर दीजिए। श्री विश्वप्रकाशजी ने कहा, "आप तो सब को सदस्य ही बनाते रहते हैं? हम लोग तो सदस्य हैं ही इनको सदस्य बनाने की क्या आवश्यकता?" मैंने कहा, "इनके बाबा ने हमें सदस्य बनाने के लिए आग्रह किया है।" तब वे बोले, इनको सदस्य बनाना आवश्यक नहीं है, लोग कहेंगे चुनाव लड़ने के लिए घर भर सदस्य बन गये, मैं चुप रह गया। एक दिन जब मैं पढ़ रहा था तब भी विनोदकुमार सामने आ गये और

पण्डितजी ने तुरन्त पूछा, ''राधे मोहन! क्या इनको समाज का सदस्य बना लिया?'' मैंने कहा, ''नहीं''। उन्होंने कहा, ''क्यों नहीं बनाया?'' मैंने कहा, ''इनके पिताजी ने कहा, इनको सदस्य बनाने से लोग कहेंगे कि घर भर चुनाव जीतने के लिए सदस्य बन गये हैं।'' पण्डिजी यह सुनकर झुंझला उठे और कहा यह बड़ी बुरी बात है समाज का सदस्य बनना प्रत्येक व्यक्ति का जन्मसिद्ध अधिकार है। चुनाव में चुनाव के दिन न जाया करें। इसलिए चुनाव के डर से समाज का सदस्य न बनना या बनाना अनुचित है।

हमने देखा है कि बहुत से आर्य पुरुषों के घर में अपने बच्चों के सदस्य न बनाने या सत्संग में न ले जाने के कारण उनकी आर्यसमाज के प्रति वह सद्‌भावना नहीं जगी जो उनके पिताजी आदि में रही है। **जिस दिन व्यक्ति आर्यसमाज का सदस्य बन जाता है उस दिन से ही व्यक्ति का स्वामी दयानन्द की आत्मा से सम्बन्ध हो जाता है और चिन्तन की धारा बदल जाती है** यदि युवक लोग आर्यसमाज से सम्बद्ध नहीं हुए, तो ये बूढ़े लोग कब तक आर्यसमाज की नैया को खेते रहेंगे?

स्वामी श्रद्धानन्द, लाला लाजपतराय, पण्डित लेखराम, गुरुदत्त विद्यार्थी आदि विद्वान् अपनी युवा अवस्था से ही आर्यसमाज से सम्बद्ध हुए और आर्यसमाज के लिए अपना सारा जीवन निछावर कर दिया। आर्यसमाज उस धोबीघाट के समान है जिसमें मैले-कुचैले कपड़े स्वच्छ और निर्मल बनकर निकलते हैं। उसी प्रकार आर्यसमाज के सत्संग में आकर और विद्वानों के प्रवचन को सुनकर आर्यसमाज के भावी कर्णधार बन सकता है इसलिए पण्डितजी के कथन को सुनकर प्रत्येक को आर्यसमाज का सदस्य अवश्य बनना चाहिए और समाज के अधिकारियों को भी चाहिए कि ऐसे नये सदस्यों को स्वाध्याय की ओर प्रेरित कर और उनका मार्गदर्शन कर महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज का सच्चा भक्त बनाने में यथोचित कार्य करें। आर्यसमाज के लिए यह कार्य अत्यन्त उपयोगी होगा।

उपासना

जैसे ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव पवित्र हैं वैसे अपने करना, ईश्वर को सर्वव्यापक अपने को व्याप्य जान के ईश्वर के समीप हम और हमारे समीप ईश्वर है ऐसा निश्चय योग अभ्यास से साक्षात् करना उपासना कहाती है, इसका फल ज्ञान की उन्नति आदि है।

यज्ञोपवीत का महत्त्व

- स्वामी जगदीशवरानन्द सरस्वती

वैदिक धर्म में संस्कारों का बहुत महत्त्व है। वैदिक धर्म के अनुसार मनुष्य की शारीरिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति के लिए सोलह संस्कारों का करना अत्यन्त आवश्यक है। सभी संस्कार महत्त्वपूर्ण हैं, परन्तु इन सबमें उपनयन-संस्कार एक विशिष्ठ स्थान रखता है। यही वह संस्कार है, जिससे बालक की शिक्षा और दीक्षा का प्रारम्भ होता एवं उसे द्विजत्व की प्राप्ति होती है। इसी समय से उसे वैदिक कर्मकाण्ड और यज्ञ करने का अधिकार प्राप्त होता है, जैसाकि वेद में भी आदेश है-

यो यज्ञस्य प्रसाधनस्तन्तुर्देवेष्वाततः।
तमाहुतं नशीमहि।। - ऋ॰ 10 । 57 ।2

अर्थात् सामान्य जनों की यह कामना है कि जो यज्ञ का साधनरूप उत्तम तन्तु-उपवीत का धागा, विद्वानों में प्रचलित है, उस विधि-विहित सूत्र को महर्षि दयानन्द ने पूना-प्रवचनों में कहा था कि- बालक मूर्ख और छोटा होने के कारण माता-पिता के अधीन रहता है। आठ वर्ष की अवस्था तक उसमें धर्म-सम्बन्धी काम करने की योग्यता नहीं होती, इसलिए हमारे धर्मशास्त्रों ने व्रत-बन्ध (यज्ञोपवीत) होने से पहले बालकों के लिए नित्यकर्म का विधान नहीं किया है।

- उपदेश मञ्जरी, 14वाँ प्रवचन

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि यज्ञोपवीत धारण न करना अपने-आपको विद्या तथा यज्ञ के अधिकार से वञ्चित रखना है और यज्ञोपवीत के बिना बालक द्विज भी नहीं बन सकता, अतः उन्नतिशील नर-नारियों को यज्ञोपवीत-संस्कार पर विशेष ध्यान देना चाहिए। वैदिक धर्म के अनुसार यज्ञापवीत एक अत्यन्त वैज्ञानिक और महत्त्वपूर्ण संस्कार है। आचार्य अथवा गुरु यज्ञोपवीत देते समय और यज्ञोपवीती यज्ञोपवीत बदलते समय जिस मन्त्र का उच्चारण करता है उसी से यज्ञोपवीत की महिमा स्पष्ट है-

ओ३म् यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं
प्रजापतेर्यत् सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्रयं प्रतिमुञ्च शुभ्रं
यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः।।
यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा
यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि।।

-पारकस्करगृह्यसूत्र 2। 2 । 11

परमपवित्र, आयुवर्धक, अग्रणीयता का द्योतक, श्वेतवर्ण का यह यज्ञोपवीत, अग्रणीयता का द्योतक, श्वेतवर्ण का यह यज्ञोपवीत, जिसे प्रजापति परमात्मा ने प्रत्येक बालक को सहज-स्वभाव से, गर्भ से, जरायु (गर्भ की झिल्ली) के रूप में प्रदान किया है, उसको तू धारण कर, पहन। यह यज्ञोपवीत तुझे बल और तेजदायक हो। तू यज्ञोपवीत है, मैं तुझे यज्ञ की यज्ञोपवीतता के साथ पहनता हूँ।

इस मन्त्र में यज्ञोपवीत को बल और तेज प्रदान करनेवाला कहा गया है। यज्ञोपवीत के तीन तारों में बल और तेज दृष्टिगोचर नहीं होता, परन्तु जो इन तारों के रहस्य को हृदयङ.म कर लेता है, उसमें बल और तेज का सञ्चार हो जाता है। इसके रहस्य को समझकर ही लाखों सिक्खों, राजपूतों और मरहठों ने अपने सिरों की आहुति दे दी, परन्तु यज्ञापवीत का त्याग नहीं किया।

'यज्ञोपवीत' वैज्ञानिक और वैधानिक संस्कार है

जिस प्रकार भारतीय शासन के तिरंगे झण्डे का एक विधान है, उसमें तीन रंगों का एक विशिष्ठ विज्ञान है, इसके मध्य में स्थित चक्र का एक अभिप्राय है, इसी प्रकार यज्ञोपवीत का भी रहस्य है। यज्ञोपवीत में तीन दण्ड, नौ तन्तु और पाँच गाँठें होती हैं।

तीन ही तार क्यों?

यज्ञोपवीत में तीन धागे अथवा तार होते हैं। तीन ही तार क्यों? इसका भी वैज्ञानिक रहस्य है। हमारे यहाँ तीन की संख्या का बड़ा महत्त्व है। सत्त्व, रज और तम- गुण तीन; पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्यु- लोक तीन; गार्हपत्य, आहवनीय, दक्षिण- अग्नि तीन; ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य- यज्ञोपवीत के अधिकारी भी तीन; अतः यज्ञोपवीत में तीन धागों का होना सुसंगत है।

यज्ञोपवीत ब्रह्मचर्य, गृहस्थ और वानप्रस्थ तीन आश्रमों में रहते हुए ही धारण किया जाता है। चतुर्थाश्रम संन्यास में पहुँचने पर इसे उतार दिया जाता है, क्योंकि यह तीन आश्रमों में धारण किया जाता है, इस अभिप्राय से भी इसमें तीन धागे हैं।

ये तीन दण्ड मन, वचन और कर्म की एकता सिखाते हैं। जो मन में है वही वचन में होना चाहिए और उसी प्रकार कर्म करना चाहिए। जब मन, वचन और कर्म में एकता होती हैं, तब मनुष्य महात्मा बन जाता है, अन्यथा वह दुरात्मा हो जाता है।

तीन दण्डों का एक और भी अभिप्राय है। वह यह कि कायदण्ड, वाग्दण्ड और

मनोदण्ड अर्थात् शरीर, वाणी और मन को संयम में रखना। कायसंयम के द्वारा ब्रह्मचर्य का पालन, गुरुओं का आदर और सत्कार, अहिंसा और तपादि; वाणीसंयम के द्वारा और मन-संयम के द्वारा मन के विकारों को दूर करके उसे शुद्ध, पवित्र और शिवसंकल्पोंवाला बनाना तथा ईश्वर-चिन्तन करना। यज्ञोपवीतधारी के लिए शरीर, वाणी और मन का यह संयम अत्यावश्यक तीन तारों में एक अन्य रहस्य छुपा हुआ है। यह संसार त्रिगुणात्मक है- सत्त्व, रज और तम की तीन लड़ियों में समस्त प्राणी बँधे हुए हैं। यज्ञोपवीत के तीन धागे यह स्मरण कराते हैं कि हमें इस संसार से निकलना है। संन्यासी संसार के मोह, माया और ममता से निकल जाता है, इसलिए संन्यासाश्रम में यज्ञापवीत उतार दिया जाता है।

साथ ही सत्त्व, रज, तम (प्रोटोन, इलैक्ट्रोन, न्यूट्रोन)- ये तीन गुण यह संकेत करते हैं कि इन गुणों से ऊपर उठकर त्रिगुणातीत होना है।

माता, पिता, आचार्य- ये तीन गुरु हैं। इन तीनों की सेवा, आदर-सम्मान करना चाहिए।

प्रात:सवन, माध्यन्दिनसवन और सायंसवन- तीन सवन होते हैं। तीनों समय के कार्यों को यथासमय करो।

यज्ञेपवीत और गायत्री का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। इसमें परमपिता के सर्वश्रेष्ठ नाम ओम् के अक्षर भी तीन ही हैं [अ, उ और म]। महाव्याहृतियाँ भी तीन ही हैं- भू:, भुव: और स्व:। गायत्री मन्त्र में पाद भी तीन ही हैं- तत्सवितुर्वरेण्यम्, भर्गो देवस्य धीमहि, धियो यो न: प्रचोदयात्।

शरीर में वात, पित्त और कफ- धातुएँ भी तीन ही हैं। इन्हें सम रखना है। इनका सम होना स्वास्थ्य है और इनमें विषमता होना रोगी होना है।

स्थूल, सूक्ष्म और कारण- शरीर भी तीन ही हैं। इनका विवेक कर आत्मा को जानना है।

दु:ख भी तीन हैं- आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक- इन तीनों से निवृत्त का नाम ही परमपुरुषार्थ अथवा मोक्ष है।

ज्ञान, कर्म और उपासना भी तीन हैं- इनके रहस्य को समझकर और तदनुसार आचरण करके परमात्मा को प्राप्त करना है।

ये तीन तार एक और संकेत भी दे रहे हैं, वह यह हि संसार में तीन प्रकार के ऐश्वर्य हैं- सत्य, यश और श्री। यज्ञोपवीतधारी को इन तीनों में से कोई एक चुनना होता है। ब्राह्मण के

लिए सत्य मुख्य है, अन्य दो बातें गौण हैं। ब्राह्मण है तो चोटी का सत्यवादी ब्राह्मण बनना, ऐसा-वैसा नहीं। क्षत्रिय बनना है तो यशस्वी और यशस्वी भी चोटी का, युद्ध में पीठ न दिखानेवाला, परन्तु साथ ही जीवन में सत्य और श्री भी हो। वैश्य बनना है तो साधारण पैसेवाला नहीं अपितु चोटी का बनना। कुबेर और भामाशाह भारत के ही थे। धन कमाना, परन्तु सचाई के साथ और यशवालों की रक्षा भी करना।

यज्ञोपवीत के तीन तार परमात्मा, आत्मा और प्रकृति- इन तीन अनादि सत्ताओं का सम्यक् ज्ञान प्राप्त करने का भी संकेत देते हैं। यज्ञोपवीतधारी, परमात्मा क्या है? उसका स्वरूप क्या है? उसकी प्राप्ति कैसे होती है? इत्यादि बातों को जानने का प्रयत्न करता है। इसी प्रकार मैं कौन हूँ? मैं कहाँ से आया हूँ? मुझे कहाँ जाना है? मेरे जीवन का लक्ष्य क्या है, आदि आत्मज्ञान-सम्बन्धी समस्याओं को सुलझाना है। प्रकृति क्या है? इससे किस प्रकार उपयोग लेकर मानव-जीवन को सुखी बनाया जा सकता है- आदि प्रकृति के विविध ज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न यज्ञोपवीतधारी करता है। जो यज्ञोपवीतधारी, 'मुझे परमात्मा, आत्मा और प्रकृति का ज्ञान प्राप्त करना है'- इस रहस्य को हृदयड.म करके यज्ञोपवीत धारण करता है, उसका यज्ञोपवीत धारण करना सार्थक है।

तीन तार एक और रहस्य के भी सूचक हैं। प्रत्येक मनुष्य पर तीन प्रकार के ऋण चढ़े होते हैं- पितृऋण, ऋषिऋण तथा देवऋण। प्रत्येक यज्ञोपवीतधारी को इन ऋणों से अनृण होने का प्रयत्न करना चाहिए।

माता-पिता जन्म देकर तथा लालन-पालन करके हमें बड़ा करते हैं। उनकी सेवा-शुश्रुषा करके यह ऋण कुछ सीमा तक चुकाया जा सकता है, इसलिए उपनिषद् के ऋषि ने **'मातृदेवो भव'** और **'पितृदेवो भव'** का उपदेश दिया है।

ब्रह्मा से लेकर महर्षि दयानन्दपर्यन्त सच्चे त्योगी, तपस्वी और वीतराग विद्वान् जिन्होंने वैदिक संस्कृति और सभ्यता को हम तक पहुँचाया है तथा समय-समय पर हमारा मार्गदर्शन करते रहे हैं, हमारा कर्त्तव्य है कि उनके द्वारा दी हुई विद्या को पढ़कर, वेदों के स्वाध्याय, उपदेशों और लेखों द्वारा इस ज्ञान को आग्र प्रवाहमान रक्खें, इस ज्ञान और विज्ञान को दूसरों तक पहुँचाएँ। यह ऋषि-ऋण से अनृण होने की विधि है।

वायु, अग्नि, जल आदि देव हैं, यज्ञ द्वारा इनको शुद्ध करना देवऋण से अनृण होना

है। **अग्निर्वै मुखं देवानाम्।** अग्नि सारे देवों का साझा मुख है। अग्नि को खिलाने से सारे देवताओं की तृप्ति हो जाती हैं।

इसका एक और अभिप्राय भी है- इन्द्रियों को भी देव कहते हैं, अतः समस्त इन्द्रियों का सदुपयोग जानकर उन्हें दृढ़ बनाना और उनका ठीक प्रयोग करना भी देवऋण चुकाना है। देव का अर्थ है परमात्मा। प्रतिदिन परमात्मा की उपासना करना।

यज्ञोपवीत के तीन धागे ब्रह्मग्रन्थि द्वारा आपस में जुड़े रहते हैं। यह इस बात का बोधक है कि मनुष्य ज्ञान, कर्म और उपासना तीनों को साथ-साथ प्राप्त करे।

इस प्रकार तीन-तीन के अनेक जोड़े हैं। इन सभी का समावेश यज्ञोपवीत के तीन तारों में हो जाता है। इसलिए यज्ञ के तीन तारों में सारे विश्व का विज्ञान भरा हुआ है।

'यज्ञोपवीत' में नौ ही तन्तु क्यों?

इसके नौ तन्तुओं में नौ देवताओं की कल्पना की गई है, यथा-

ओंकारः प्रथमे तन्तौ द्वितीयेऽग्निस्तथैव च।
तृतीये नागदैवत्यं चतुर्थ सोमदेवता॥
पञ्चमे पितृदैवत्यं षष्ठे चैव प्रजापतिः।
सप्तमे मरुतश्चैव अष्टमे सूर्य एव च॥
सर्वे देवास्तु नवमे इत्येतास्तन्तुदेवताः॥

-सामवेदीय छान्दोग्यसूत्र परिशिष्ट

पहले तन्तु में ओंकार, दूसरे में अग्नि, तीसरे में अनन्त, चौथे में चन्द्रमा, पाँचवें में पितृगण, छठे में प्रजापति, सातवें में वायुदेव, आठवें में सूर्य और नवें तन्तु में सर्वदेवता प्रतिष्ठित हैं।

यज्ञोपवीत धारण करनेवाला बालक यज्ञोपवीत के तन्तुओं में स्थित नौ देवताओं के निम्न गुणों को अपने अन्दर धारण करता है-

1) ओंकार-एकतत्त्व का प्रकाश, ब्रह्मज्ञान।
2) अग्नि- तेज, प्रकाश, पापदहन।
3) अनन्त- अपार धैर्य और स्थिरता।
4) चन्द्रमा- मधुरता, शीतलता, सर्वप्रियता।
5) पितृगण- आशीर्वाद, दान और स्नेहशीलता।
6) प्रजापति- प्रजापालन, स्नेह, सौहार्द।
7) वायु- पवित्रता, बलशालिता, धारणशक्ति, गतिशीलता।
8) सूर्य- गुणग्रहण, नियमितता, प्रकाश, अन्धकारनाश, मल-शोषण।
9) सर्वदेवता- दिव्य और सात्विक जीवन।

जो यज्ञापवीत के इन गुणों को स्मरण कर, इनसे प्रेरणा प्राप्त करेगा, उसका जीवन उच्च, महान् यशस्वी और तेजयुक्त क्यों न होगा?

नौ तन्तुओं का एक और भी रहस्य है।

अथर्ववेद के अनुसार यह शरीर **''अष्टाचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या''** (10। 2 । 31) आठ चक्र और नौ द्वारोंवाला एक नगर है। यह नगर है मानव-देह। यज्ञोपवीत के नौ तन्तु हमें एक सन्देश देते हैं कि प्रत्येक द्वार पर एक-एक प्रहरी नियत करना है, जिससे हम कोई बुराई हमारे अन्दर प्रविष्ट न हो सके। ये नौ द्वार हैं- दो आँख, दो कान, दो नासिका के छिद्र, एक मुख, ये सात हुए। इनके लिए वेद में कहा है- **सप्त ऋषयः प्रतिहिताः शरीरे** [यजुः॰ 34 । 55] हमारे शरीर में सात ऋषि बैठे हुए हैं। इन्हें ऋषि बनाना है। ये ऋषि बन गये तो जीवन का कल्याण हो जाएगा। यदि ये राक्षस बन गये तो जीवन का विनाश हो जाएगा। दो मल-मूत्र त्यागने के छिद्र हैं। इस प्रकार कुल नौ द्वार हैं। यज्ञोपवीत के नौ तार यह सन्देश देते हैं कि हमें प्रत्येक द्वार पर एक-एक चौकीदार बैठाना चाहिए।

हम आँखों से अच्छे दृश्य देखें, प्रभु की रचना के सौन्दर्य को निहारें, गन्दे दृश्य और स्वास्थ्य को नष्ट करनेवाले सिनेमादि न देखें। हमारी दृष्टि ऐसी हो-

मातृवत् परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत्।
आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पश्यति॥

दूसरे की स्त्रियों को माता के समान, दूसरों के धन को मिट्टी के समान, और सब प्राणियों को अपने समान देखें, क्योंकि ऐसा देखनेवाला ही वास्तव में देखता है।

कानों से हम परमात्मा का गुणगान सुनें, प्रभु का कीर्तन सुनें, गाली-गलौज और गन्दे गाने न सुनें। यज्ञोपवीतधारी का जीवन वेदमय होना चाहिए और वेद के अनुसार-

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम।

- यजुः॰ 25 । 21

कानों से हम उत्तम बातें सुनें।

इसी प्रकार नाक से उत्तम, दिव्यगन्ध ही सूँधे, ओम् का जप करें [जप नाक से ही होता है] विषयवासनाओं की गन्ध ही न लेते रहें। जिह्वा से स्वास्थ्य-वर्धक, उत्तम और सात्त्विक पदार्थों का सेवन करें एवं मधुर वाणी बोलें। उपस्थ और गुदा का भी संयम रक्खें। सच्चे ब्रह्मचारी बनें। यह है यज्ञोपवीत के नौ तन्तुओं का विज्ञान।

पाँच गाँठों का रहस्य

यज्ञोपवीत में पाँच गाँठें होती हैं। पाँच गाँठें पञ्चमहायज्ञों को करने की ओर संकेत कर रही हैं। पितृऋण, ऋषिऋण और देवऋण चुकाने के लिए इन यज्ञों का करना अनिवार्य है।

गृहस्थों को प्रतिदिन पाँच यज्ञों का अनुष्ठान करना चाहिए। पाँच यज्ञ ये हैं-

1. ब्रह्मयज्ञ- सन्ध्या और स्वाध्याय।

2. देवयज्ञ-अग्निहोत्र और विद्वानों का मान-सम्मान।

3. पितृयज्ञ-जीवित माता-पिता, दादा-दादी, परदादा-परदादी-इनका श्राद्ध और तर्पण करना, इनकी सेवा-शुश्रुषा करके इन्हें सदा प्रसन्न रखना और इनका आशीर्वाद प्राप्त करना।

4. बलिवैश्वदेवयज्ञ- घर में जो भोजन बने उसमें से खट्टे और नमकीन पदार्थों को छोड़कर रसोई की अग्नि में दस आहुतियाँ देना और कौआ, कुत्ता, कीट-पतङ., लूले-लंगड़े, पापरोगी, चाण्डाल को भी अपने भोजन में से भाग देना।

5. अतिथियज्ञ- घर पर आनेवाले वेद-शास्त्रों के विद्वान् धार्मिक उपदेशकों का भी आदर-सम्मान करना।

पाँच कोश हैं- अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनन्दमय- इनका वियोग कर आत्मा को इनसे पृथक् समझना है।

पाँच ग्रन्थियों का एक और भी अभिप्राय है। प्रत्येक मनुष्य में काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार-रूपी पाँच गाँठें हैं। यज्ञोपवीत की ये ग्रन्थियों यज्ञोपवीतधारी को यह स्मरण कराती हैं कि इन गाँठों को खोलना है।

यज्ञोपवीत में चार गाँठें नीचे होती हैं, एक ऊपर। मनुष्य को ज्ञान चाहिए। ज्ञान का स्त्रोत वेद हैं, अत: ज्ञान प्राप्ति के लिए वेद का अध्ययन करें। वेद में ज्ञान कहाँ से आया? वेदों में ज्ञान चाहिए। ज्ञान का स्त्रोत वेद हैं, अत: ज्ञान प्राप्ति के लिए वेद का अध्ययन करें। वेद में ज्ञान कहाँ से आया? वेदों में ज्ञान आया ब्रह्म से। इसीलिए ऊपर की गाँठ को ब्रह्मग्रन्थि कहते हैं। ज्ञान-प्राप्ति के लिए परमात्मा से सम्बन्ध जोड़े।

यज्ञापवीत 96 चप्पे का ही क्यों?

यज्ञोपवीत हाथ की चार अंगुलियों पर 96 बार लपेटा जाता है। इस प्रकार यज्ञोपवीत का परिमाण 96 चप्पे होता है। यह 96 अंगुल ही क्यों होता है, इसके निम्न कारण हैं-

प्रत्येक व्यक्ति अपनी अंगुलियों से 96 अंगुल का होता है। यदि सन्देह हो तो मापकर देख लें। 96 अंगुल का यज्ञोपवीत हमें यह स्मरण कराता है कि यज्ञोपवीत कन्धे से कटिप्रदेश तक ही नहीं है, अपितु शरीर का अङ.-प्रत्यक्ष और प्रत्येक रोम इससे बिंधा हुआ है।

छान्दोग्य परिशिष्ट में इस प्रश्न का समाधान करते हुए कहा गया है-

तिथिवारं च नक्षत्रं तत्त्ववेदगुणान्वितम्।
कालत्रयं च मासाश्च ब्रह्मसूत्रं हि षण्णवम्।।

अर्थात् 15 तिथि, 8 बार, 27 नक्षत्र, 25 तत्त्व, 4 वेद, 3 गुण, 3 काल और 12 मास- इनकी कुल संख्या 96 होती हैं। यज्ञोपवीत में ये सब निहित हैं, अतः यज्ञोपवीत 96 अंगुल का होता है।

मानवमान 84 अंगुल का और देवमान 96 अंगुल का होता है। यज्ञोपवीत धारण कर वेद-व्रत और ब्रह्म-व्रत का अनुष्ठान कर मनुष्य को देवत्व और अन्त में ब्रह्मत्व प्राप्त हो, इसीलिए यज्ञोपवीत देवमान अर्थात् 96 अंगुल का बनाया जाता है।

यज्ञोपवीत कटि तक ही क्यों?

यज्ञोपवीत वाम स्कन्ध से धारित किया जाकर हृदय और वक्षस्थल पर होता हुआ कटि-प्रदेश तक पहुँचता है। इसमें भी एक बहुत बड़ा वैज्ञानिक रहस्य छुपा हुआ है। प्रत्येक मनुष्य के ऊपर तीन प्रकार के बोझ हैं। मनुष्य में भार उठाने की शक्ति कन्धे में है, इसलिए यज्ञोपवीत कन्धे पर डाला जाता है। संसार में बोझ को वही वहन कर सकेगा जो कटिबद्ध है, जिसकी कमर कसी हुई है, इसलिए यज्ञोपवीत कटि-प्रदेश तक लटकता है।

यज्ञोपवीत बाएँ कन्धे से क्यों?

तीन ऋणों एवं यज्ञों को हृदय से स्वीकार किया जाता है। हृदय वामभाग में ही होता है, इसलिए यज्ञोपवीत वामस्कन्ध से हृदय पर होता हुआ दाहिनी ओर धारण किया जाता है। संसार में सफलता वही प्राप्त करेगा, जो लक्ष्य को अपने सम्मुख रखेगा और लक्ष्य उसी व्यक्ति के समक्ष रह सकता है जो किसी कार्य को हृदय से करे, इसीलिए यज्ञोपवीत हृदय पर होता है।

यज्ञोपवीत के कन्धे, हृदय और कटि-प्रदेश पर ही ठहराने का एक और भी रहस्य है और वह यह है कि कन्धे के उपर ज्ञानेन्द्रियाँ आरम्भ हो जाती हैं; जिह्वा इसका अपवाद है। मनुष्य देव बन जाता है, वह संन्यास ले-लेता है, और यज्ञोपवीत उतार दिया जाता है।

यज्ञोपवीत के सम्बन्ध में दो बातें और स्मरणीय हैं। एक यह कि प्रत्येक व्यक्ति को एक समय में एक ही यज्ञोपवीत धारण करना चाहिए, दो नहीं। दूसरी यह कि यज्ञोपवीत श्वेत होना चाहिए, क्योंकि मन्त्र में उसे **''शुभ्रम्''** कहा गया है।

मेखला

उपनयन संस्कार में मौंजी भी धारण करनी पड़ती है। वेद में मेखला के गुण इस प्रकार वर्णन किये गये हैं-

श्रद्धाया दुहिता तपसोऽधि जाता
स्वस ऋषीणां भूतकृतां बभूव।

सा नो मेखले मतिमा धेहि

मेधामथो नो धेहि तप इन्द्रियं च ॥

अथर्ववेद 6.133.4

यह मेखला श्रद्धा की पुत्री, तप से उत्पन्न होनेवाली, यथार्थकारी ऋषियों की बहिन है। यह मेखला हमें बुद्धि, मेधा, कष्टों को सहन करने का सामर्थ्य और इन्द्रियों की विशुद्धता प्रदान कराती है।

मेखला-धारण जहाँ वीर्य-रक्षण में सहायक है तथा अण्डकोष-वृद्धि आदि रोगों को रोकती है, वहाँ शतपथब्राह्मण के शब्दों में यह आत्मतेज भी प्रदान करता है, इसीलिए उपनयन के समय इसके धारण करने का विधान है।

अन्य मतों से यज्ञोपवीत

सिक्खों के प्रथम गुरु श्री नानकदेवजी की एक वाणी इस विषय में बहुत ही महत्त्वपूर्ण है-

दया कपाह सन्तोष सूत, जत गंठी सत वट्ट।
एह जनेऊ जीऊ का हयिता पाण्डेय धत्त॥
नाय यह तुट्टे ना मल लागे न यह जले न जाय।
धन्न सो मानुस नानका जो गल चल्लै पाय॥

श्री नानकदेवजी यज्ञोपवीत को अति श्रेष्ठ समझते थे, अतः उन्होंने मानसिक यज्ञोपवीत धारण करने पर विशेष बल दिया है, क्योंकि वह न कभी टूट सकता है और न कभी मैला हो सकता है।

जैनमत के 'आदिपुराण' में लिखा है कि "इस सवर्णीकाल के प्रथम चक्रवर्ती भरत महाराज ने दिग्विजय यात्रा करके सेना लेकर दिग्विजय की प्रथा चलाई। एक दिन राजद्वार में घास आदि बोकर उन्होंने सारी प्रजा को बुलाया। जो लोग घास पर से दरबार में आये उन्हें पूर्ण अहिंसक न समझा गया और जो लोग जीव-हिंसा के भय से घास पर से न आकर अन्य मार्ग से आये वे श्रेष्ठ ब्राह्मण पदवाच्य हुए और उन्हें उपवीत दिया गया।"

इस प्रकार जैनग्रन्थों में भी यज्ञोपवीत का स्पष्ट उल्लेख है।

महात्मा गौतम बुद्ध ने "उपनयन को धर्म-मार्ग पर ले-जानेवाला और उपवीत को शान्तपद की प्राप्ति करानेवाला" कहकर उल्लेख किया है।

-मंझिम निकाय 1 । 5। 9 तथा 3 ।2।6

पारसियों के यज्ञोपवीत धारण करने का मन्त्र इस प्रकार है-

फ्राते मज्दाओ वरत् पौरवनीम् एयाओं धनिमस्तेहर पाये संघेम, मैन्यतस्तेम् बन्धुहिम् दयेनीम् मज्दवास्नाम्॥

-जेन्द अ॰ प॰ 3, पृ॰ 238

ऐ डोरा! तू तारों के समान तेजस्वी तथा श्रेष्ठ

दैवीशक्तिवाला है, और आयु का देनेवाला है। पवित्र पारसी धर्म के चिन्ह यज्ञोपवीत! तुझे सबसे पहले मज्दा ने धारण किया था, मैं भी तुझे पहनता हूँ।

इस प्रकार इतिहास के अवलोकन से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि वैदिक धर्म में यज्ञोपवीत अत्यन्त प्राचीनकाल से चला आ रहा है।

उपनयन का समय

इस संस्कार का वेदानुकूल समय ब्राह्मण के लिए 8 वर्ष, क्षत्रिय के लिए 11 वर्ष, और वैश्य के लिए 12 वर्ष है। जैसाकि मनुजी महाराज ने लिखा है-

गर्भाष्टमेऽब्दे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनायनम्।
गर्भादेकादशे राज्ञो गर्भात्तु द्वादशे विशः।।

-मनु॰ 2 । 36

व्यासस्मृति तथा महाभारत आदि में भी ऐसा ही विधान है, परन्तु यदि उपर्युक्त समय पर यज्ञोपवीत न हो सके तो ब्राह्मण का 16, क्षत्रिय का 22 और वैश्य का 24 वर्ष से पूर्व यज्ञोपवीत हो जाना चाहिए। यदि इस समय तक भी यज्ञोपवीत संस्कार न हो तो ये पतित हो जाते है।।

स्त्रियों को यज्ञोपवीत का अधिकार

कुछ धर्म के ठेकेदार इस अत्यन्त पवित्र और महत्त्वपूर्ण संस्कार से स्त्रियों को वञ्चित रखना चाहते हैं, परन्तु प्राचीन ग्रन्थों के अवलोकन से पता चलता है कि प्राचीनकाल में पुरुषों की भाँति स्त्रियों को भी यज्ञोपवीत पहनने का अधिकार था, जैसाकि पारस्कर-गृह्यसूत्र में लिखा है-

स्त्रिया उपनीता अनुपनीताश्च।

-पा॰पृ॰ 84, सिद्धिविनायकप्रेस, सं॰ 1936

स्त्रियाँ दो प्रकार की होती हैं- यज्ञोपवीत पहननेवाली और यज्ञोपवीत न पहननेवाली।

इसी प्रकार यम-संहिता में लिखा है-

पुराकल्पे तु नारीणां मौञ्जिबन्धनमिष्यते।
अध्यापनं च वेदानां सावित्रीवाचनं तथा।।

अर्थात् प्राचीन समय में कन्याओं का उपनयन संस्कार होता था तथा उन्हें गायत्री का जप और वेदाध्ययन करने की भी आज्ञा थी।

महर्षि दयानन्द ने अपने एक प्रवचन में कहा था- ''स्त्रियों को भी विद्या-सम्पादन का अधिकार पहले था और उसके अनुकूल इनका व्रतबन्ध पूर्व में करते थे।''

-उपदेश मञ्जरी, 7वाँ व्याख्यान

यज्ञोपवीत और गायत्री

यज्ञोपवीत और गायत्री का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है, अतः यहाँ गायत्री मन्त्र के

सम्बन्ध में दो-चार शब्द लिखना अप्रासंगिक न होगा।

गायत्री मन्त्र यह है-

ओ३म्

भूर्भुवः स्वः।

तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।

धियो यो नः प्रचोदयात्॥ - यजुः॰ 36 । 3

इस मन्त्र का सरलार्थ इस प्रकार है-

हे सर्वरक्षक ! सच्चिदानन्दस्वरूप, सकलजगत् उत्पादक, सूर्यादि प्रकाशकों के भी प्रकाशक! आपके सर्वश्रेष्ठ पाप-नाशक तेज को हम धारण करते हैं। हे परमात्मन्! आप हमारी बुद्धि और कर्मों को श्रेष्ठ मार्ग में प्रेरित करें।

मनु महाराज गायत्री के विषय में लिखते हैं-

सावित्र्यास्तु परं नास्ति - मनु॰ 2 । 83

गायत्री से श्रेष्ठ कुछ भी नहीं है।

वास्तव में वेद-शास्त्र, पुराण और स्मृतियाँ गायत्री की महिमा से भरे पड़े हैं। इसकी महिमा महान् है। जो इसका जप और अनुष्ठान करता है, वही इसके प्रभाव को जानता है।

यज्ञोपवीत-सम्बन्धी कुछ प्रश्नोत्तर

प्रश्न- क्या मलमूत्र त्यागने से पूर्व यज्ञोपवीत का कान पर चढ़ाना आवश्यक है?

उत्तर- नहीं, यह आवश्यक नहीं है। कुछ लोग यज्ञोपवीत को कान पर चढ़ाने में यह हेतु देते हैं कि कर्णेन्द्रिय और मूत्रेन्द्रिय का आपस में सम्बन्ध है और यज्ञोपवीत को कान पर चढ़ाने से किसी नाड़ी-विशेष पर दबाव आदि पड़ने से वीर्यदोषादि रोग नहीं होते, परन्तु आयुर्वेद और पाश्चात्य शरीर-विज्ञान-सम्बन्धी ग्रन्थों में ऐसा कोई उल्लेख नहीं है कि कर्णेन्द्रिय और मूत्रेन्द्रिय का आपस में कोई सम्बन्ध है। हाँ, इतनी बात अवश्य है कि मलमूत्र विसर्जन करते समय यज्ञोपवीत नाभि से ऊपर रहना चाहिए, जिससे मूत्रादि के छींटे न लगें।

प्रश्न- यज्ञोपवीत अपवित्र कैसे होता है?

उत्तर- यदि यज्ञोपवीत-संस्कार होने के पश्चात् तीन दिन तक सन्ध्या न करे तो द्विज शूद्रवत् हो जाता है। वह प्रायश्चित्त करने पर शुद्ध होता है और पुनः संस्कार कराना लिखा है। जन्म-शौच, मरण-शौच, रजस्वला-स्पर्श, और टूट जाने पर यज्ञोपवीत अपवित्र हो जाता है; तब उस यज्ञोपवीत को उतारकर नूतन यज्ञोपवीत धारण करना चाहिए।

प्रार्थना

अपने सामर्थ्य के उपरान्त ईश्वर के सम्बन्ध से जो विज्ञान आदि प्राप्त होते हैं उनके लिए ईश्वर से याचना करना और इसका फल निराभिमान आदि होता है।

हिन्दुओं के प्रिय देश नेपाल से एक चिट्ठी

2 अप्रैल 2012 को रात्रि 3 बजे हम काठमाण्डू पहुँचे। ये हमारी छटवी विदेश यात्रा है। इसके पूर्व विश्व के पांच महाद्वीपों में इस वैदिक धर्म का प्रचार कर चुके हैं। 3 अप्रैल को सायं 7 बजे राष्ट्रपति भवन जाकर हमने नेपाल गणतन्त्र के महामहीम राष्ट्रपति श्री रामवरन यादव जी से लगभग एक घंटे तक विचार विमर्श किया। हमारे साथ सुप्रसिद्ध उद्योगपति व सांसद श्री विमल केडिया, आर्य समाज के अधिकारीगण तथा अन्य माहानुभाव शिष्ट मंडल में थे। हमने राष्टपति जी को नेपाली भाषा का सत्यार्थ प्रकाश व कुछ वैदिक साहित्य भेंट किया। अपकी रूचि को देखकर अथर्ववेद के एक मंत्र का सहाय लेते हुए पारिवारिक राष्ट्रीय मूल्यों, 16 संस्कारों तथा योगशिक्षा से संबंधित कुछ बातें आपके समक्ष रखी। ऋषि दयानंद व उनकी परम्परा के आर्य विद्वानों के जीवन-चरित्र, श्री रामचन्द्र जी व योगेश्वर कृष्ण जी के जीवन की कुछ घटनायें तथा वैदिक सिद्धांतों को शिक्षा पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने का निवेदन किया। आपको उदयपुर, अजमेर व होशंगाबाद के आर्य तीर्थ स्थलों पर आमंत्रित किया। आप कोलकाता से MBBS किये हुए विगत 40 वर्षों की सक्रिय राजनीति का अनुभव रखने वाले नेपाली कांगेस के वरिष्ठ नेता है। आपने सभी बातों पर न केवल अपनी सहमति दी अपितु उदारभाव से उत्तरदायित्वपूर्ण यथोचित प्रश्नोत्तर भी किये। आपने बताया कि तख्ता पलट होते समय तीन बार भारत ने नेपाल का साथ दिया है, अभी भी हम ऐसी ही अपेक्षा रखते है। ग्यातव्य है यहाँ के राजा को सदियों से विष्णु का अवतार माना जाता रहा है। परन्तु सशस्त्र हिंसक क्रांतिकर राजशाही अत्रस्थ जनता ने खत्म कर दी है अब इस देश का नया संविधान बनाया जा रहा है। नेपाल इस समय गंभीर राजनैतिक अस्थिरता के दौर से गुजर रहा है। 1447 की भारत की रक्त रजित परिस्थियाँ यहाँ भी होने की आशंका व्यक्त की जा रही है। एक दिन समय निकालकर नेपाल में भारत के राजदूत महामहीम श्री जयन्तीलाल श्रीवास्तव जी से भी हमने मुलाकात की। आपको सत्यार्थ प्रकाश सहित वैदिक साहित्य भेंट किया। नेपाल से भारत जाने वाले संस्कृत के विद्याथियों को छात्रवृत्ति देने का आग्रह किया जो आपने अगले सत्र से स्वीकार कर लिया। आप बिहार के रहवासी है। वस्तुतः 21मार्च को हम नेपाल आ चुके थे तब से अभी तक पन्द्रह दिनों में अनेक अंचलों में हमारे यज्ञ प्रवचन के कार्यक्रम हुए। साया जिले में यजुर्वेद पारायण यज्ञ, सात बच्चों

का यज्ञोपवित संस्कार करवाने के साथ-साथ सैंकड़ों धर्म जिज्ञासुओं के बीच वेद व्याख्यान का सुअवसर मिला। इसी जिले के मुख्यालय चन्द्रगढ़ी एड्न्हो केट बार कौंसिल के अधिवक्ता बंधुओं के बीच लगभग 60 मिनट तक न्याय तथा नैतिकता, विषय पर हमने व्याख्यान दिया। ये हमारा सताईसवाँ उद्‌बोधन था दूसरे पूर्व शोलापुर, आजमगढ़, भिवानी, इंदौर, कोटा, रोहतक, सहारनपुर, दबोह, गजियाबाद, पानीपत सहित भारत के 26 नगरों के वकील भाईयों तथा अनेकत्र न्यायाधीश महानुभावों को हम संबोधित कर चुके है। नेपाल का क्षेत्रफल मात्र 45 हजार वर्गमील है यह हिमालय की तलहरी पर बसा भारत के चार राज्यों की सीमा को स्पर्श करता हुआ विश्व में सर्वाधिक नदियों वाला छोटा सा देश है। इसके भौगोलिक दृष्टि से तीन भाग हैं हिम क्षेत्र (जो बारह मास बर्फ से आच्छादित रहता है), पर्वतों के मध्य बसा पहाड़ी क्षेत्र, तथा सामान्य मैदानी क्षेत्र। प्रशासनिक दृष्टि से पूरा देश 14 अंचलों के 65 जिलों में विभक्त है जिसमें लगभग 6800 ग्राम व एक सौ नगरपालिकायें आती हैं। कुल आबादी 3 करोड़ हैं जिसमें 20प्रतिशत हिन्दु, 11 प्रतिशत बौद्ध, 3प्रतिशत मुस्लिम व ईसाई के केवल नब्बे हजार है जो धर्यान्तरण के कारण बढ़ते जा रहे है। 47 प्रतिशत जन नेपाली भाषा बोलते हैं जो संस्कृत व पहाड़ी हिन्दी का मिश्रित रूप है। जनक नन्दिनी महारानी सीता महात्मा गौतम बुद्ध व प्रसिद्ध वास्तु वेत्ता भृकुटी (अरनिको) की जन्सस्थली होने का गौरव नेपाल को प्राप्त है। पाण्डवों का एक वर्ष का अज्ञातवास यहाँ विराट नगर के राजा के सेवकों के रूप व्यतीत किया गया था।

शताब्दियों से नेपाल विस्तृत आर्यावर्त का ही एक भूभाग था। भारत जैसे 22 माण्डलिके राजा यहाँ छोटे 2 भू भागों में राज्य कर रहे थे। प्लासी के प्रथम युद्ध 1747 के बाद हमें गुलाम बनाकर अंग्रेजों ने प्रयत्न किया कि वे इसे भी अपने आधीन कर लें। पर नहीं कर सके । 1956 में काठमाण्डू (काठमण्डप) को नेपाल की राजधानी श्री पृथ्वीनारायण शाही ने बनाया और 1696 में अंग्रेजों ने सुगौली संधि कर नेपाल की अन्तर्राष्ट्रीया सीमायें तय कर दी। जून 1896 में ऋषि दयानंद के अनन्द शिष्य पं. माधवराव जोशी जी के द्वारा आर्य समाजी आपके पुत्र थे। जिन्होंने यहाँ की एक तन्त्रीय राणाशाही को समाप्त करने तथा अन्ध विश्वासों को दूर करने में अपना बलिदान दिया। आपको 1649 में फाँसी दी गई थी। इनकी बहन चन्द्रकांता जी ने ही नेपाल का प्रथम कन्या विद्यालय खोलकर स्त्री शिक्षा का सूत्रपात किया था। आर्य समाज की 26 शाखायें अनेक डी.ए.वी. स्कूल व दो गुरूकुल यहाँ संचालित है। परन्तु आर्यों में पर्याप्त शिथिलता है।

प्रभुकृपा से हमारे आने से कुछ जागृति 25 वर्षों बाद देने को मिली। नेपाल के सरगम रेडियों स्टेशन पर हमारे नौ व्याख्यान विभिन्न विषयो पर रिकार्ड किए गये व एक का सीधा लाइव प्रसारण भी किया गया। डेढ़ लाख नेपाली भारत की सेना में 15 लाख पूरे देश में श्रम कार्यों में कार्यरत है। 30 लाख नेपाली खाड़ी देशों में जाकर काम कर रहे है। परिवार के मुखिया के दूर रहने से नई पीढ;ी में कुछ दोष आ रहे हैं। भारत सरकार अपना छोटा पुत्र व मित्र मानकर नेपाल को प्रतिवर्ष करोंड़ो अरबो रुपये की सहायता देती है पर जनसामान्य में कृतज्ञता का कोई भी भाव दिखाई नहीं देता है। 66 प्रतिशत मन्दिरों में बलि प्रथा है। दशहरा, दीपावली, बौद्ध जयंती, गणेश चतुर्थी और महाशिवरात्रि पर्व बड़े स्तर पर मानाये जाते है। त्योहारों पर मुर्गा, बतख, भैसा, बकरा व भेड़ इन पाँच प्राणियों का बलिदान देते है। शिवरात्रि पर चरस, गाँजा, अफीम आदि से सेवन बड़े पैमाने पर करते हैं। शराब स्कीकृति पत्र लेकर किसी भी दुकान में बेची जा सकती है। बिक्रम संवत्सर प्रमुख रूप में प्रयोग होता है। एशिया का सबसे बड़ा व प्रसिद्ध नेत्र चिकित्सालय मैचीनगर में है। संस्कृत का पठन–पाठन माओवादियों ने कम करवा दिया है। आर्य प्रचारको की यहाँ नितान्त आवश्यकता है। विश्वरूपा मंदिर के सस्वर वेदपाणठियों को प्रवचन देने के साथ इस दौरे की हमारी एक उपलब्धि ये भी रही कि सिलीगुढ़ी डी.पी.एस वालों के सुरेन्द्र इंजीनियरिंग कॉलेज के प्रबुद्ध छात्रों के बीच 'तनाव रहित जीवन' विषय पर लगभगब हमें 60 मिनट तक अपने छोटे भाई बहनों को मार्गदर्शन देने का अवसर वही के पं. रति राम शर्मा परिवार के उपलब्ध करवा दिया गया। 5 अप्रैल को मध्याह्न 2.40 पर जेट लाईट की फ्लाईट से हम दिल्ली पहुँचेंगे। दिल्ली सीमा पर स्थिति बादली आर्य समाज के उत्सव पर सेवाकर 1 माह बाद 10 अप्रैल 2013 को म॰ प्र॰ आगमन होगा।

कर्म ही पथ है, नहीं कोरा विशर्शन है,
चमकता कब स्वर्ण यदि होता न घर्षण है।
आर्य समाज व गृह मंदिर में सभी को नमस्ते कहें।

आचार्य आनंद पुरुषार्थी
अन्तर्राष्ट्रीय वैदिक मिशनरी

'सगुणनिर्गुणस्तुतिप्रार्थनोपासना' जो–जो गुण परमेश्वर में हैं उनसे युक्त और जो–जो गुण नहीं है उनसे पृथक मान कर प्रशंसा करना सगुणनिर्गुण स्तुति, शुभ गुण नहीं है उनसे पृथक मान कर प्रशंसा करना सगुणनिर्गुण स्तुति, शुभ गुणों के ग्रहण की ईश्वर से इच्छा और दोष छुड़ाने के लिए परमात्मा का सहाय चाहना सगुणनिर्गुणप्रार्थना और सब गुणों से सहित सब दोषों से रहित परमेश्वर को मान कर अपने आत्मा को उसके और उसकी आज्ञा के अर्पण कर देना सगुणनिर्गुणोपसना कहाती है।

मनुष्य के लिये महर्षि दयानन्द का यह विचार अनुकरणीय है, आगे उन्होंने व्यवहार भानु में भी विद्या प्राप्ति के चार कर्म में एक, मनन के बारे में लिखते हैं कि जो-जो शब्द, अर्थ और सम्बंध आत्मा में एकत्र हुए हैं उनका एकान्त में स्वस्थ चित होकर विचार करना कि कौन शब्द किस शब्द, कौन अर्थ किस अर्थ और कौन संबंध, किस संबंध के साथ संबंध अर्थात् मेल रखता हैं, और उसके मेल से किस प्रयोजन कि सिद्धी और उलटे होने में क्या-क्या हानि होती है।

संसार में जितने भी उपदेश हुए हैं वे सभी मनुष्य के लिये ही है क्योंकि मनुष्य विवेकशील प्राणी हैं। मनुष्य में उपदेश ग्रहण करने की शक्ति है। कल्याण मार्ग पर चलना चाहने वालों के लिये सबसे पहली बात यह है कि वह जो कुछ सुने, पढ़े, उपदेश प्राप्त करे उसे वह पालन करे, अमल में लावें, आचरण करने लगे और अपने जीवन का हिस्सा बना लेवें। मानव जीवन की यही सार्थकता है। केवल मानव आकृति धारण कर मानव, मानव मानव नहीं बन सकता। हितोपदेश में कहा गया है-

आहार निद्रा भय मैथुनं च सामान्यमेतत पशुर्मिन्रराणाम्!
धर्मो ही तेषामधिको विशेष, धर्मेहीन, पशुभिः समानः,॥

भोजन करना, सोना, भयभीत होना और संतान उत्पन्न करना ये सभी पशुओं और मनुष्यों में समान रूप से पाया जाता है परन्तु धर्माचरण ही मनुष्य को पशुओं से अलग करता है, विशेष स्थान प्रदान करता है। इसलिये मनुष्य बनने का सर्वोत्तम उपाय यही है कि वह वेदों, कर्मों को करे, और धर्माचरण को अपनाये ऋग्वेद में भी कहा गया है, ''मनुर्भव'' अर्थात् हे प्राण! तू मनुष्य बन। पशुओं को न पक्षिओं को और न ही कीट पतंगों को। केवल मनुष्य को ही मनुष्य बनने का निर्देश है। उसका स्पष्ट अर्थ है कि अन्य प्राणी केवल स्वाभाविक ज्ञान लेकर जन्म लेता है और मरते दम तक स्वाभाविक ज्ञान में ही रहता है। परन्तु मनुष्य का स्वाभाविक ज्ञान माँ के स्तन से दूध खीचना और रोना है। बाकी जो कुछ भी सीखता है वह नैमितिक ज्ञान द्वारा प्राप्त करता है।

पं. संजय सत्यार्थी
सह सम्पादक

आर्य संकल्प रजि. नं0-पी.टी.260

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा की प्रेरणा से आर्य समाजों में आगामी वार्षिकोत्सव - 2013

आर्य समाज चेवारा, शेखपुरा
तिथि- 7 से 10 मई तक
आगत विद्वान-
आचार्य विद्यादेव, टंकारा
वहन पुष्पा शास्त्री, हरियाणा
पं. संजय सत्यार्थी, क्रांतिकारी कवि
प्रभुचन्द आर्य पथिक- चेवारा

आर्य समाज, कौआकोल, नवादा
तिथि- 25 से 28 अप्रील
आगत विद्वान-
स्वामी शिवानन्द सरस्वती
बहन अंजली आर्या
पं. संजय सत्यार्थी, क्रांतिकारी कवि
28 अप्रील को जिला सभा की बैठक

आर्य समाज, भागलपुर
तिथि- 15 से 17 अप्रील
आगत विद्वान-
पं. संजय सत्यार्थी

आर्य समाज, नरकटियागंज
तिथि- 9 से 14 अप्रील
आगत विद्वान-
आचार्य भानु प्रकाश,
महेन्द्र पाल आर्य दिल्ली
श्याम वीर राघव, दिल्ली

आर्य समाज, ढाका पूर्वी चं.
तिथि- 11 से 14 अप्रील
आगत विद्वान-
आचार्य सदानन्द शास्त्री, वरंगनिया
पं. संजय सत्यार्थी, पटना
वहन नैन श्री प्रज्ञा, देवरिया
भजनोपदेशिका, ध्रुव आर्य

आर्य समाज, मोतिहारी
तिथि- 08 से 12 अप्रील
आगत विद्वान-
वेद प्रकाश श्रोत्रिय, दिल्ली
वहन अंजली आर्या, हरियाणा

आर्य समाज के पदाधिकारियों से निवेदन है कि अपने समाज, के कार्यक्रमों की सूचना दें जिसे हम आर्य संकल्प में प्रकाशित कर सकें।

मुद्रित सामग्री

सेवा में,
श्री/मेसर्स....................
मो0....................
पो0....................
जिला....................

प्रेषक :
सभा-मंत्री
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला
पटना-८०० ००४

(प्रति के न मिलने पर यह अंक प्रेषक को ही लौटा दें।)

स्वत्वाधिकारी, बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा,, श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला, पटना-4 के लिए श्री रमेन्द्र कुमार गुप्ता (मंत्री) द्वारा जय उमा प्रिन्टर्स, पटना द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।